अरण्य रोदन

सुवास दीपक



संभावना प्रकाशन
रेवती कुंज, हापुड़-245101

अरण्य रोदन (उपन्यास), © सुवास दीपक, मूल्य : 20·00 रुपये
प्रकाशक : संभावना प्रकाशन, रेवती कुंज, हापुड़-245101, आवरण : करुणानिधान,
प्रथम संस्करण : 1985, मुद्रक : हरिकृष्ण प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-32

ARANYA RODAN (Novel)
First Edition : 1985
By Suvas Deepak
Price : 20·00

उसने मैकाले साहब को अन्तिम प्रणाम किया और दूसरे दिन शुभ मुहूर्त में शिक्षा विभाग के नाम— सैठो साहब के नाम, जो अब जिले के शिक्षा अधिकारी थे, अपना इस्तीफा लिखा और सिर पर कफन बांधकर इस 'अरण्य रोदन' को लिखने के लिए कलम उठा ली।

अरण्य रोदन

एक

यह जो पाठशाला है न, इसमे सप्ताह में शनिवार को तीसरे पीरियड के बाद सांस्कृतिक कार्यक्रम होता है। उसे कई पाठशालाओं में बालसभा भी कहते है, पर मैंने सांस्कृतिक कार्यक्रम इसलिए कहा है कि वाकई यह इसी प्रकार प्रयुक्त होता है—सिर्फ मैंने शब्द को उस भाषा से, जो चाहे हमारे नेताओं द्वारा मंचों पर एक राजनीतिक हथकंडा बना कर वोट लेने के लिए तिरस्कृत की जाती है, पर एक छोटी-सी पनवाड़ी की दुकान हो या संसद, उसके बिना हमारे महान देश में काम नहीं चल सकता। आप जान गए होंगे कि मैंने "कल्चरल प्रोग्राम" को सांस्कृतिक कार्यक्रम क्यों लिखा है। आखिर हम हिन्दी साहित्यकार जो ठहरे। खैर, हमारी पाठशाला के इस सास्कृतिक कार्यक्रम, जो सप्ताह में एक बार होता है, के आयोजक महोदय पहले पीरियड से ही कक्षाओं में जाकर कार्यक्रम में भाग लेने वाले छात्र-छात्राओं के नाम एक कागज पर लिख लेते हैं। होता यह है कि जब आयोजक महोदय उक्त कार्यक्रम के लिए बच्चों को स्वेच्छा से अपने-अपने नाम लिखवाने के लिए कहते हैं तो हमेशा की तरह बच्चों के चेहरों पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। ऐसा लगता है जैसे उन्हें इस बेहूदा हरकत में कतई दिलचस्पी नहीं है। जब कोई नहीं उठता तो आयोजक महोदय हमेशा की तरह उन्हीं बच्चों के नाम लिख लेते हैं जो अरसे से एक ही आइटम पेश करते आ रहे हैं। जैसे हमारे देश मे सरकार चाहे जो कोई भी हो, नारे और भाव-भंगिमाएं प्रायः एक जैसी ही हैं और सरकार तो चलानी ही है! हमारी पाठशाला का सांस्कृतिक कार्यक्रम होना ही है!

तीसरे पीरियड के तुरन्त बाद बच्चे अपने-अपने कमरों से, दड़बों से निकले चूजों की तरह बरामदे में इकट्ठा होना शुरू हो जाते है। भगदड़ सी मच जाती है। मछली बाजार का सा नजारा, शोर-शराबा उत्पन्न हो जाता है। उन्हें ठीक से बिठाने तथा चुप कराने की किसी को चिन्ता नहीं है। चूंकि सारा देश ही एक बड़े शोर मे, अपनी-अपनी डफली, अपना-

मुद्रा अपना ली।

प्रधानाध्यापक चूँकि अनुभवी जीव थे। खुद एक अदद पति और पांच बच्चों के बाप होने पर यह नही था कि प्यार-व्यार के मामले से अनभिज्ञ हों। उन्होने अपने ही दफ्तर में दरवाजे पर हिन्दी फिल्मो का एक सीन देखा, जिसमें प्यार का एक मूक प्रदर्शन हो रहा था। उन्होने आँखें बंद की, फिर खोली। निश्चिन्त हुए कि वह कोई सपना नही था। घोर यथार्थ था। उठ खड़े हुए और फिर बैठ गए। चश्मा उतारा, फिर चढ़ाया खांसना चाहा, पर खास नही सके। बोलना चाहा, पर बोल नही पाए। उन्हें अपनी जवानी याद आ गई। आह! क्या डिवोशन है। आचार्य रजनीश क्या चीज इनके आगे?

जब भाटिया ने दरवाजे पर आकर खैनी बनाकर एक हथेली पर दूसरी हथेली चटाक से दे मारी तो दोनो का ध्यान भंग हुआ। मिस लिपस्टिक दफ्तर में ही बैठ गईं और आयोजक इस प्रकार बाहर निकले थे, जैसे वे हवा मे उड़ रहे हैं। उन्हें अभी-अभी सुपर नेचुरल अनुभव हुआ था और उन्होंने एक निहायत प्यारी मुस्कान वयः संधि पर खड़ी कन्याओं पर फेंक दी।

जब उस मौसमी रोमांस का खुमार उतरा तो वस्तुस्थिति से अवगत हुए। याद आया कि वह प्रधानाध्यापक के कक्ष में आयोजकी से त्यागपत्र देने के लिए गए थे। उठे और फिर सीधे कक्ष में घुस गए। इस बार वह किसी से नही टकराए। पर सामने पड़ते ही प्रधानाध्यापक की आवाज उनके कानों से टकरा गई।

"डोगरे, यह क्या रोमियो-जूनियटी चल रही है यहाँ? यह अनुशासन के खिलाफ है। तुम बिना शादी किए इस प्रकार की आशिकी नही कर सकते। हमने पम्मी की मम्मी को शादी के बाद ही आशिकी की थी। तुम इस चक्कर को छोड़ो। शादी करनी है तो हमें कहो। हम मिनटों में तुम्हारी शादी करवा देते हैं। कहो तैयार हो?"

"मैं त्याग पत्र देने को तैयार हूँ।" आयोजक डोगरे ने घोषणा की।

"किस···किस चीज का। का कहत हो भाई?" प्रधानाध्यापक अपनी देहाती पर उतर आते हैं ऐसे मौकों पर।

पर आयोजक साहब तनिक गुस्से मे थे, बोले, "मुझे यह आयोजकी-फायोजकी नही चाहिए। आप खुद देखें, इस कार्यक्रम को।"

प्रधानाध्यापक सेठी साहब ने तुरन्त आपात बैठक बुलाई। शिक्षक रेंगते से अपनी सुविधानुसार कक्ष मे दाखिल हुए।

जब सभी बैठ गए तो सेठी साहब ने पूछा, "हाँ भई डोंगरे, अब कहो तुम्हे क्या तकलीफ है?"

वस्तुस्थिति का आभास होते हुए भी अनभिज्ञता जताने पर आयोजक बौखला उठते हैं, "इसका मतलब यह हुआ कि आप लोग सभी अन्धे हैं?"

"इसका मतलब?" सेठी साहब ने अपनी ऐनक को ठीक करके डोंगरे की आँखो में इस प्रकार झाका जैसे वह यह प्रमाणित करना चाहते हो कि बरखुरदार, हम बाकायदा अच्छी नजर रखते हैं—बतर्जे गालिब—हम भी चश्मे के अन्दर दो आँख रखते हैं, अन्धे नहीं हैं।

"देखो भाई, यह सब चूतिया पन्थी है। जो नही मानता, उसकी गाड़ काट लो।"

इस वाक्य मे जो विशेषण प्रयुक्त हुए हैं, वे थी सेठी के विशेष तकिए कलाम हैं। इनके बिना उनकी प्राजल एवं परिष्कृत भाषा का अस्तित्व ही नही है, कोई पहचान ही नही है।

"हमने कह दिया है जनाब कि इस "चूतियापथी" से हमारी छुट्टी कीजिए।" डोंगरे अडिग था।

सेठी साहब ने पैंतरा बदला। वह अखाड़े के पुराने पहलवान रह चुके हैं अत: प्रत्येक प्रकार का दाव लगाना वह अपना गुरु कर्त्तव्य समझते हैं।

"देखो, भाई, तुम एक अच्छे आदमी हो। हमे फक्र है कि हमारी पाठशाला मे तुम्हारे जैसा एक अदद सास्कृतिक अभिरुचियो वाला टीचर है। तुम्हारे रिज़ाइन देने से पाठशाला के सास्कृतिक डिपार्टमेंट को तथा स्कूल को कितनी लॉस होगी। बच्चो को सस्कृति और सभ्यता सिखानी है। कलाओं के प्रति उनकी इन्ट्रेस्ट जगानी है।"

इतने मे एक लड़का दफ्तर के सामने सास्कृतिक अभिरुचियो का

प्रदर्शन करता दिखाई दिया।

साहब खड़े हो गए।

"नाथ ! देख, कौन भिखमंगा आया है या कोई तूफान तो नहीं ? मौसम विभाग ने कोई सूचना तो भेजी नही।"

नाथ इदी अमीन हैं पाठशाला के लिए। उनकी शक्लो सूरत खतरनाक हद तक अमीन दद्दा से मिलती जुलती है।

"क्या है नामाकूल ?"अमीन दद्दा दहाड़ते है। साथ लड़के की नाक बह रही है। हिचकियों के साथ होठो तक लटकी नाक को ऊपर खीचता है। अजीब संतुलन है हिचकियो और बहती नाक का ऊपर नीचे होना।

"सर'''राजू ने मेरी सीट पर पेंसिल खड़ी करके रख दी थी'''।"

वह अपनी निक्कर नीचे खिसका कर दिखाता है। सचमुच पेन्सिल जाने से खून बह रहा था।

दूसरा लड़का अपने को बचाने के लिए अपना बयान पेश करता है—"सर, यह मुझे मा-बहिन की गालिया दे रहा था।"

"क्या रे ?" प्रधानाध्यापक जो अभी तक चुप थे, पूछ लेते हैं।

"सर, इसने मुझे मा की''',कहा।"

"ए, मैंने कब कहा ?"

"नही कहा था ?"

"कब कहा था ?"

दोनों दफ्तर में ही फ्री स्टाइल कुश्ती की कलाबाजियां दोहराने लग जाते हैं।

इदी अमीन अर्थात् नाथ उन्हें गर्दनों से उठा कर बच्चो की भीड़ मे फैंक देते हैं।

यह सास्कृतिक कार्यक्रम का अन्त नही बल्कि शुरूआत हो रही थी।

खैर, आयोजक महोदय ने मनाने पर अपना त्याग पत्र उसी प्रकार वापस ले लिया जिस प्रकार हमारे देश के मन्त्री सुबह त्यागपत्र देते हैं और शाम को वापस ले लेते हैं।

जैसे तैसे कार्यक्रम शुरू हुआ। छुट्टी होने में केवल पन्द्रह मिनट बाकी थे।

आयोजक ने नाम पुकारा—"बाबू मुरली मनोहर लाल इलाइची-

वाला, सातवी कक्षा, कविता सुनाएगे।"

मुरली मनोहरलाल भैंगा है और चलते हुए पीछे मुड़-मुड़कर देखने की उसकी एक विशिष्ट अदा है। वह जो कविता सुनाने जा रहा है, वह उसकी स्वलिखित नही है बल्कि पाठ्य-पुस्तक से याद की गई थी। अपने दस-वर्षीय स्कूली जीवन मे यह उसकी महान उपलब्धि है, नही तो उसे सौ तक की गिनती नही आती। जब वह अपनी विशिष्ट अदा से उठता है तो सारी पाठशाला हस उठती है। पीछे एक लड़का कहता है, 'मुड़-मुड़ के न देख मुड़-मुड़ के।'

सभी शिक्षक अपनी-अपनी खिचड़ी पका रहे होते हैं। सेठी साहब भाटिया को बता रहे हैं कि पम्मी की मम्मी के अनुसार इस बार की गेहूं अच्छी नही थी मार्किट मे।

मुरली मनोहरलाल खड़ा है और छोटे-बड़े सभी लड़के उसे आंखें मार रहे हैं। वह बार-बार पीछे मुड़कर देखता है कि कब शुरू करूं ?

आयोजक महोदय अपनी महबूबा की याद में खोए थे कि अचानक चौंक उठते हैं। उनके मुह से अचानक "लतिका" शब्द निकल जाता है। धत् तेरे की ! बात कही बलगड़ न बन जाए। दरअसल वह अपनी महबूबा के ख्यालो मे इतने डूबे थे कि अचानक ही उसका नाम "लतिका" मुह से निकल पड़ा। लतिका दूसरे शहर मे थी। एक लड़की जो पांचवी मे पढ़ती थी, उसका नाम भी लतिका था। उस छात्रा ने सोचा कि उसकी बारी आ गई है। वह उठती है।

तब बाबू मुरली मनोहरलाल सिर खुजलाता भैंगी नजर से आयोजक की ओर देखता है, "सर, मेरी कविता !"

"हां, भैया, पहले तुम ही सुनाओ, लतिका तुम अभी बैठो !"

मनोहरलाल खंखार कर शुरू करता है—"ए बेठा नानी, भिकेर ले ले।

रकमी छ दराजमा।

बाबुले मर्दा छोरो नै बिग्रयो, नेपाली समाजमा···।"

एक ही सांस मे वह इस कविता को सुनाकर पीछे मुड़कर देखता हुआ अपनी जगह पर बैठ जाता है।

आयोजक अगला नाम पुकारते है—लतिका, गीत !"

लतिका उठती है और लजाती हुई गीत शुरू कर देती है। पर उसकी आवाज इतनी धीमी है कि पास ही बैठे आयोजक को भी सुनाई नही देती।

"लाउड्ली प्लीज !"

पर तब तक उसका गीत समाप्त हो गया होता है और वह भाग कर अपनी जगह पर बैठ जाती है।

आइटम खत्म होने पर बच्चे तालिया बड़ी तन्मयता से बजाते है। मंच पर चाहे जिस रस की रचना हो पर वे उतने ही जोश से तालियां पीटते रहेगे। पीछे बडी कक्षाओ के लड़के खैनी बनाकर एक दूसरे को बाटते अपनी-अपनी खिचड़ी पकाने में मशगूल रहते हैं।

इस प्रकार सास्कृतिक कार्यक्रम समाप्ति की ओर है अन्त में परम्परा के अनुसार प्रधानाध्यापक का भाषण होता है। वह उठते हैं और अपनी ऐनक ठीक करते हैं और कहते है—"बच्चो।"

बच्चो पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। उन्हे कोई सरोकार नही है कि मंच पर प्रधानाध्यापक है या दूसरी कक्षा का कोई विद्यार्थी। वे अपनी-अपनी खिचड़ी पकाने मे व्यस्त हैं। क्रियाशील हैं। शिक्षा-अध्येताओं ने भी कहा है कि बच्चों को कक्षाओ मे मूर्तियों की तरह निर्जीव नहीं रखना चाहिए, उनमें हरकतें होनी चाहिए। इस मामले में यह पाठशाला काफी विकास पर है।

"बच्चो! सास्कृतिक कार्यक्रम हमारे देश के लिए बहुत अर्जेण्ट है। यह जो है, यह तुम समझ गए होंगे कि हम इसे सप्ताह मे एक बार क्यो मनाते हैं। संगीत, कला जो है उनमे तुम्हारी रुचि जगाने और इन कलाओ को सामूहिक रूप से आत्मसात करने के लिए ये आयोजन किए जाते हैं। हम चाहते हैं कि तुम भविष्य मे कालीदास बनो, सूरदास बनो, बिठोवन बनो।"

वह आयोजक की ओर मुड़े और पूछा, "भई क्या नाम है उस कवि का'''हा याद आया प्रेमचन्द। उसी की तरह बनो। तुम अपनी-अपनी रचनाएं लिखकर पाठशाला की हस्तलिखित पत्रिका के लिए दो।

"हमारी पाठशाला जो है वह जीनियस कलाकारो से भरी है। सुब्बा-

राव संगीत में नई धुनें बनाते हैं। तुम्हें पता है, जब शिक्षा मन्त्री जी आए थे तो उनके स्वागत गान के लिए कितनी उम्दा धुनें बनाई थी। डोगरे जैसे शायर हमारे बीच हैं।

जब हम कालिज मे पढते थे,तो हम भी कविताए लिखते थे। तुम्हें शायद पता नही होगा कि हमने एक कविता की किताब छपाई है। उसी में से एक कविता इस प्रकार है।

और वह खंखार कर स्वर ठीक करके बेहद हास्यास्पद ढंग से गा-गा कर कविता सुनाते हैं—

"गाव-गाव मे औरतें चरखा चलाती हैं किसान हल चलाते है।
चिड़िया चिड़चिड़ करती हैं···।"

वह कविता मे इतने डूब गए थे कि उन्हे बच्चो के चिल्लाने और हूँटिंग करने का कोई ध्यान नही रहा।

कविता खत्म करके वह फिर बोलते हैं, "···तो तुम्हे मैंने जिस कविता को अभी-अभी तुम्हे सुनाया है, उसमे जो है, गाव का चित्रण है।"

और वह अपने बाजू से पसीना पोछकर बैठ जाते है।

तभी लड़के खड़े हो जाते है, क्योकि राष्ट्रीय गीत होता है। राष्ट्रीय गान का अद्‌भुत समा बधता है और अभी खत्म ही नही हुआ कि एक लड़का भीड़ से निकल कर पहले ही घटी तक पहुच चुका होता है।

और टन···टन···टनन ··घटी बजते ही बच्चे इस प्रकार भागते हैं जैसे दड़बो से मुर्गिया।

सभी सास्कृतिक कार्यक्रम का भरपूर आनन्द और मनोरजन लेकर अपनी-अपनी राह चल पड़ते हैं।

जिस प्रकार देश की सरकारें चल रही हैं, उसी प्रकार सरकार के मातहत विभिन्न विभाग चल रहे हैं। सेठी साहब की सरकार बनाम पाठ-शाला भी उसी प्रकार चल रही है। विरोधी दल चाहे जैसे भी कुत्तो की तरह भौकते रहे, सरकार चलती रहेगी। पाठशालाओ मे हम जैसे अध्यापक चाहे जितना भी विरोध प्रकट करें, पाठशालाएं चलती रहेगी। सरकार विरोधियो की आलोचना को इस प्रकार नजरअन्दाज करती रहती है जिस प्रकार हमारे देश के ऋषि-मुनि सासारिक मायाजाल से कटे अन्तर्मुखी से

पड़े रहते थे और अब इन ऋषि-मुनियों का स्थान बुद्धिजीवियों ने ले लिया है। कहा नहीं जा सकता कि यह सौभाग्य है या दुर्भाग्य। यह अन्तर्मुखीपन देश को अन्दर ही अन्दर से खोखला बनाता रहा है। ऋषिजन आखें मूदे बैठे रहे, आक्रमणकारी आए और शासक बन बैठे। दिल्ली के सिंहासन पर विभिन्न हस्तियां बैठी, उन्होंने अपनी महानता के डंके बजाए, महल-बगीचे खड़े किए, प्रेम के उदाहरण दुनिया के समक्ष प्रस्तुत किए, पर देश की आम जनता के चेहरे का सूखापन सलामत रहा। उस पर कोई रौनक नहीं आई, कोई हरित क्रान्ति नहीं हुई।

···कहने का तात्पर्य यह है कि इस प्रकार चलता रहा। भारत स्वतंत्र हुआ क्योंकि गुलाम था। यदि गुलाम नहीं होता तो स्वतन्त्रता दिवस मनाते ही क्यों? अपनी सरकारें बनी। योजनाएं रेंगती रहीं। शिक्षा पद्धति जनाब मैकाले ने शुरू की थी जिससे आज तक हम चिपके हैं। चिपकने में हम काफी आगे है। कितने वफादार हैं हम! स्वतन्त्र है, अपना देश है, गौरवपूर्ण इतिहास है जो पुस्तकालयों में दीमकों और तिलचट्टों का आहार बनता आ रहा है।

···और इसी शिक्षा पद्धति की गौरवशाली परम्परा को बरकरार रखने के लिए देश की सरकारें प्रतिबद्ध हैं। इसे स्वाभिमान की सीमा तक बरकरार रखकर और उसी की बैसाखियों के सहारे चलते एक दिन हम अध्यापकों को यह पता चला कि सेठी साहब इन्सपेक्टर हो गए हैं।

जब यह समाचार पाठशाला में पहुंचा तो उस समय छुट्टी का समय हो रहा था। कुछ शिक्षक घंटी लगने से पहले टीले के नीचे पहुंच चुके थे। ये ऐसे शिक्षक थे जिन्हें न तो ऊधो के लेने में दिलचस्पी थी न माधो के देने में। वे छात्रों की तरह घंटी की प्रतीक्षा किए बिना ही कक्षाओं से निकल कर गेट तक पहुंच चुके होते हैं। पर भाटिया डोंगरे और नाथ जैसे कुछेक चमचे थे जो छुट्टी के बाद भी रुक जाते थे। भाटिया सेठी साहब से अपना काम करवाने अथवा सेठी साहब भाटिया से काम लेने में एक-दूसरे से तिगड़मबाजी लगाते थे। डोंगरे मिस लिपस्टिक के साथ कुछ समय तक फिल्मी रोमांस लड़ाता था।

जब इन्हीं चमचों को सेठी साहब ने बड़े इत्मीनान से अपने इन्सपेक्टर

हो जाने का सुसमाचार सुनाया तो इन पर विभिन्न प्रतिक्रियाएं हुईं। ऐसा नही था कि ये तीनो सेठी साहब के जाने पर खुश हुए हों। तीनो ब्रह्मा, विष्णु, महेश की मुद्रा मे मसले पर गम्भीर रूप से विचार करने लग गए। नाथ इस त्रिमूर्ति का एक सदस्य तो था पर वह इसी जमीन की शैली मे बैठा था। पर उसके चेहरे और दिल में क्या भाव उमड़ रहे थे, इसका पता तो कोई कम्प्यूटर ही बता सकता है क्योंकि नौ के नौ रसो के आविर्भाव के बावजूद उसके चेहरे पर स्थाई भाव कायम रहता था। वह हँस रहा है, अथवा रो रहा है, कोई नही बता सकता था। केवल जब वह हँसता था तो छत्त पर चिपकी छिपकलियां तथा बाहर आम के पेड़ पर बैठी गिलहरियां अवश्य उसके ठहाकों से घबरा कर इधर-उधर भागने लगती थीं। कभी-कभार तो घबडाई हुई छिपकलियां सेठी साहब की चांद पर आर्मस्ट्राग की तरह लैण्ड कर जाती थी।

भाटिया इसलिए उदास था कि अब यदि कोई दूसरा प्रधानाध्यापक आया तो रोजाना उसे तिगड़म बाजी लगा कर एकाध पीरियड की लिफ्ट नही मिल पाएगी और डोगरे इस प्रकार उदास था जैसे उसकी प्रेमिका उसे छोड़ कर किसी दूसरे के साथ भाग गई हो। उसे लग रहा था जैसे कही कुछ खो-सा गया है क्योंकि हिन्दी फिल्मों का-सा हवाई रोमांस अब वह प्रधानाध्यापक के ही कमरे में नही लड़ा पाएगा।

खैर, सेठी साहब उस शाम संसार के प्रत्येक जीव जन्तु तक से प्यार कर रहे थे। यहां तक कि उनके क्वार्टर जाने के रास्ते की पगडंडी पर चपरासी झिड़कूमल की बकरी चर रही थी, उन्होंने प्यार से उसे सहलाया और कहा, "बेटा, अब तुम्हें कोई प्यार करने वाला यहां नही रहेगा। भारतवर्ष में हमें काफी बड़े और भारी काम करने हैं। हमें तुम जैसे प्यारे बच्चों को छोड़कर जाने मे काफी दुख है।"

क्वार्टर पर पहुंच कर उन्होंने पम्मी को खुद दूध पिलाया। ट्यूशन पढ़ने वाले बच्चो को उन्होने अपनी तरह बड़ा बनने के लिए एक जोरदार भाषण दिया। अपनी तरह मिसाल स्थापित करने के लिए उकसाया। उन्होने बताया कि बचपन मे वह बकरियां चराया करते थे और अपनी चार बीघे जमीन मे मूंगफली और तम्बाकू उगाया करते थे। उन्होने कहा,

इस तरह उन्नति करके ऊपर उठने का उदाहरण और कहीं नहीं है। अतः भारत सरकार उन्हें और ज्यादा महत्वपूर्ण काम सौंपने जा रही है। विभाग में उनके मार्गदर्शन के बिना अनेक काम अधूरे पड़े हैं।

बच्चों को क्या पल्ले पड़ा, भगवान जानता है। हां, इतना वे अवश्य जान गए कि 'सर' का ट्रांसफर हो गया है।

दूसरे दिन कुछ विरोधी अध्यापकों ने यह बात फैला दी कि सेठी साहब ने शिक्षा मंत्री की खुशामद करके अपना काम बनाया है।

शिक्षा मंत्री पिछले महीने स्कूल का निरीक्षण करने आए थे। नेताओं और मंत्रियों के आगमन की सूचना एकाध महीने पहले ही दी जाती है। यह अवधि सम्भलने के लिए काफी होती है। उनकी नींद उसी दिन हराम हो जाती है जिस दिन मंत्री महोदय के निरीक्षण में आने की सूचना मिलती है। उसी दिन से यह लगने लगता है कि देश की पाठशालाओं में कोई सांस्कृतिक क्रान्ति होने वाली है। प्रधानाध्यापक नामक शख्स का चेहरा बदल जाता है, वह अब चेयरमेन माओ का चेहरा ओढ लेता है। हर क्षण अपने मातहत अध्यापकों की त्रुटियां निकालता रहता है। मन्त्रियों को जो निरीक्षण करना होता है। वह तो आप जानते ही हैं कैसा और किस प्रकार का होता है। बुकंदरों की तरह फोटोग्राफरों को पोज देना, न्यूज रील बनवाना, अखबारों में लम्बे-लम्बे लिखित भाषणों के साथ फोटो खिंचवाना, आदि से लेकर अन्त तक का समूचा काण्ड पूर्वनिर्मित होता है। सत्ता के सभी घटकों का इसमें निजी स्वार्थ छिपा रहता है। अतः सेठी जी ने भी उस शुभ दिन के लिए बाकायदा लंगोट कस लिया। उन्होंने सोचा कि यही समय है, अपने दांव-पेंच दिखाने का। मर्द का बच्चा अखाड़े में पहलवानों के दाव-पेंच न दिखा कर क्या गुसलखाने में दिखाएगा? अतः उस दिन की तैयारियां शुरू कर दी। स्वयं को भी तैयार करना शुरू कर दिया। अपने को तो क्या खाक तैयार किया पर पहली श्रेणी से लेकर आठवीं श्रेणी तक के अध्यापकों की एक आपात् बैठक बुला कर बच्चों की पढाई में जी जान से जुट जाने को कहा।

दूसरे दिन से ऐसा लग रहा था कि हमारी पाठशाला की मार्फत देश में एक सांस्कृतिक क्रान्ति की नींव डाल दी गई है।

पहली श्रेणी का मास्टर अपनी श्रेणी के छात्रों को शरीर के अंगों के नाम अंग्रेजी में स्वयं प्रदर्शन करके रटाने लग गया। वह सिर पर हाथ रख कर 'हेड' कहता और इस प्रकार 'हेड' से 'टेल' तक गिना देता। बच्चे इतने जोर से चिल्लाते कि नीचे बाजार तक उनकी आवाज सुनाई देती।

इसी प्रकार प्राथमिक कक्षाओं तक हुआ। छठी कक्षा से प्रत्येक विषय पर ध्यान से यह अनुसंधान होता रहा कि कौन-कौन से लडके कक्षाओं में तेज तर्रार हैं। उन्हें विषय विशेष में कुछ उत्तर रटा दिए गए। शिक्षकों को भी ऐसे हथकण्डे सिखा दिए गए कि उस समय कौन-कौन से विषय पढ़ाने है और कौन-कौन से प्रश्न पूछने हैं। सारी की सारी तैयारी इस प्रकार हुई जैसे युद्ध स्तर पर की जाती है। गर्ज यह कि युद्ध क्षेत्र के समस्त दाव-पेंच, पैराशूट, एम्बुश, पीठ दिखाकर भागना, कैमोफ्लाई करना आदि का अभ्यास करा दिया गया।

किसी जहाज के उडान भरने से पहले जिस प्रकार उसके सभी कल-पुर्जों की अधिकारिक रूप से जांच-परख कर ली जाती है, उसी प्रकार सेठी साहब ने भी स्कूल रूपी जहाज की, उसके कल-पुर्जे रूपी छात्र-छात्राओं की तथा जहाज के पायलट रूपी शिक्षकों की जांच पूरी करके शिक्षा मन्त्री के आने से दो दिन पहले तक उडान के लिए तैयार कर लिया। अपनी इस महान उपलब्धि के बारे में वह प्रार्थना सभा में, बाजार में दाल चावल बेचने वाले मोदी से, मेहतरानी से तथा क्वार्टर जाते समय झिड़कूराम की बकरी तक को सुनाते रहे कि आए कोई माई का लाल और हमारे स्कूल का इम्तहान ले। काम करते है भई, स्कूल चलाना कोई लौंडो का खेल थोडो है।

शिक्षा मन्त्री ने चुनाव से पहले गांव में अपना डेयरी फार्म खोल रखा था। बीसेक भैंसें थी, जिनका दूध बेचकर वह देश के स्वास्थ्य को कायम रखे थे। स्कूल का मुंह उन्होंने देखा नहीं था। किताबों से ज्यादा उन्हें भैंसों से प्यार था। जोहड़ में जब भैंसें पड़ी हों तो तैर कर उन तक पहुंचना और उनकी पीठ पर बैठना उन्हें बहुत भाता था। चूंकि मन्त्री महोदय के पिता श्री ने उन्हें पाठशाला भेजना चाहा था पर पाठशाला का नाम लेते ही वह खेत की ओर भाग जाते और भैंस की पीठ पर लेटे रहते पशुओं से प्रेम

उन्हे वराग्य की हद तक उस समय पहुंचा था जब उन्होंने एम० एम० चेनप्पा देवर की फिल्म 'गाय और गोरी' देखी थी। चूंकि उनके पास गाय नहीं थी और गोरी की जगह रामरतन पंडित की चौदह वर्षीय बिटिया थी, तब उनके पच्चीस वर्षीय जीवन में गोरी का प्रेम अंकुरित हुआ था।

गाव मे वह गोरी के प्यार और भैंस के सानिध्य में जवान हुए। उसके बाद डेयरी फार्म के मालिक कैसे बन गए इसके बारे में गाव वालो को ज्यादा मालूम नही है। खैर, पाठक इसी बात पर तसल्ली कर लें कि भारत मे यह सब कुछ सभव है। पर इतना ही उनकी तकदीर मे नही था। उन्हें देश की सेवा करनी थी। स्वास्थ्य के मसले पर डेयरी फार्म का दूध आपके घर पहुंच जाता है या स्वय बूथ पर जाकर आपको लाना पड़ता है। उस दूध से आप अपनी तथा अपने परिवार की सेहत मे क्रांतिकारी परिवर्तन तो ला ही रहे है क्योंकि आपकी सेहत पर तो देश की अर्थ व्यवस्था और सुरक्षा का प्रश्न खड़ा है। इसी स्वास्थ्य से ही देश-विदेश की कम्पनियों की दवाइयों का महल खड़ा है। लाखों डाक्टर और हकीम हैं जो आपके स्वास्थ्य के सहारे जिन्दा हैं क्योंकि यदि आप बीमार नही पड़ेंगे तो उनका चूल्हा नही जलेगा'''। खैर, हम शिक्षा मंत्री के बारे में बात कर रहे थे।

वह प्रदेश के शिक्षा मंत्री हो गए। इस पर किसी ने टीका-टिप्पणी नही की कि सिर्फ उन्ही को ही शिक्षा मंत्री क्यो बनाया गया, किसी अन्य को क्यों नही। हो सकता है भविष्य मे पीलू मोदी की तरह कोई यह प्रश्न उठा सकता है कि राजनारायण को केन्द्रीय मन्त्री बनाया तो किसने ?

पाठशालाओं का मुआयना करने के लिए उन्होने प्रदेश की तमाम पाठशालाओ में नोटिस भिजवा दिए। निर्धारित दिन पर वह धावा बोलने वाले थे। सेठी साहब अपनी पूरी बटालियन के साथ मुकाबला करने के लिये तैयार थे।

बटालियन तो तैयार थी ही। एक मन्त्री के आगमन पर जो कुछ होता है उस सबका वर्णन करके मैं आपको बोर नही करना चाहता। केवल इतना ही कहना चाहता हूं कि देश के विकास मे, विकास चाहे जो भी हो, जन संख्या मे हो, गरीबी में हो अथवा किसी मन्त्री के आगमन पर होने वाले खर्च मे हो, सभी मे कीर्तिमान स्थापित किए जाते रहे हैं। शिक्षा

मंत्री के आगमन पर होने वाले खर्च हेतु कस्बे में चन्दे उगाहे गए। बच्चों से भी उगाहा गया।

प्रत्येक कक्षा मे आते, मुआयना करते हुए जो दृश्य मंत्री महोदय ने हमारी पाठशाला मे देखा, वैसा उन्होने कही भी नही देखा था। मन्त्री महोदय को लगा कि वह जम्बूद्वीप मे न होकर शायद विलायत में हों। इससे पहले भी वह एकाध पाठशाला का मुआयना कर चुके थे पर ऐसी प्रगति उन्होने वहा नही देखी थी। तोतो की तरह रटे प्रश्नो के उत्तर, शरीर के अगों के अंग्रेजी में नाम आदि उनके लिए काफी रोमांचकारी थे। बच्चे 'नाक' की जगह 'मुह' कह देते और 'घुटने' की जगह 'पेट'। मन्त्री महोदय को अब खाक पता था कि 'नोज' नाक होती है या कान। उनके पीछे पिल्लो की तरह दुम हिलाते निदेशक, इन्सपेक्टर आदि जानते हुए भी रग मे भंग नही करना चाहते थे। वैसे भी तो यह देश की प्रगति का प्रश्न है। थोडी-बहुत गलतियाँ तो होती ही रहती है''।

खैर, शिक्षा मत्री काफी खुश हुए और मुर्ग की टाग चबाते हुए उन्होंने सचिव को आदेश दिया कि चूकि सेठी साहब की पाठशाला की पढाई का स्तर बहुत ऊचा है, इसलिए इनकी पदोन्नति होनी चाहिए। सचिव ने नोट कर लिया और सेठी साहब एक महीने के अन्दर ही इन्सपेक्टर हो गए।

सेठी साहब इसपेक्टर हो गए। एक भावभीनी विदाई उन्हे दी गई। विदाई के समय किसी की आखो मे आसू थे किसी के दिल में खुशी। ईदी अमीन बनाम नाथ काफी दुखी था। हमारे जैसे आशु कवि ने उस विदाई समारोह पर एक नज्म, बतर्ज फिल्मी धुन पर गाई जिसमे प्रधानाध्यापक को राष्ट्र की महान विभूति कहा गया था।

उनकी विदाई हो रही थी और उन्हे विश्व का सर्वश्रेष्ठ शिक्षाविद् समाज शास्त्री और महापुरुष होने का खिताब दिया जा रहा था। उनकी प्रशसा के पुल बाधे जा रहे थे ताकि वह सीधे किसी खड्ड, नाले को स्वय तैरने की बजाय पुल के रास्ते विभाग तक पहुंच जाए। कहावत है न, ''मरें सिपाही, नाम हवलदार का।'' इसी सन्दर्भ मे रात-दिन तैयारिया शिक्षक-शिक्षिकाओ ने की। शिक्षा क्षेत्र में एक महीने की अवधि में क्रान्ति ला दी। सभी बच्चों को सारे पहाड़े याद करवा दिए पर खिताब

मिला सेठी साहब को। इसी खिताब की बैसाखियो के सहारे वह विभाग तक पहुंच गए। हम लोग वही खड़े सिर खुजलाते रह गए। हम वही मुर्द-सर रहे, हमारी सेहत पर कोई असर नही पड़ा पर दस्त जरूर लग गए हम लोगों को और पायखाने जाते सेठी साहब को कोसने लग गए। एक ओर ईर्ष्या हो रही थी तो सोचते थे कि चले गए तो अच्छा हुआ। सोचा गया कि अपने ही आदमी इन्सपेक्टर बने हैं न। 'अपने आदमी' की इस भारतीय मानसिकता की नौकरशाही से सत्ता के सर्वोच्च शिखर तक पहुंच है। इसी स्थिति मे हम लोग भी इसी बात पर आश्वस्त थे कि यह महोदय कम से कम हमारी ओर ध्यान तो देंगे ही। हो सकता है कल रिटायर होने पर अपनी खाली जगह पर हमें इन्सपेक्टर बनाने की सिफारिश कर दें। भारत मे सौ से एक कम प्रतिशत अर्थात् 99% नौकरीपेशा मानस इसी आशा से जीता है। दूसरे की बैसाखियों के सहारे अपने भविष्य को सवारने की फिराक मे रहते हैं क्योकि यह ख्वाहिश अच्छी पोजीशन पाने की होती है। इसमे देश की प्रगति अथवा सेहत पर इकन्नी भर भी फर्क पड़ता हो ऐसा उदाहरण हमने आज तक तो न देखा है और न ही सुना है।

वायदे करना तो हमारे देश का एक सास्कृतिक पहलू है अतः सेठी साहब ने भी सभी शिक्षकों को आश्वासन दिया कि विभाग मे जाकर वह सभी की तकलीफें दूर करने के लिए जी तोड मेहनत करेंगे।

दो

सेठी साहब के इंसपेक्टर बन जाने पर पाठशाला में प्रधानाध्यापक का स्थान काफी समय तक के लिए खाली रहा। पाठशालाओं की परम्पराओं के अनुसार प्रधानाध्यापक के स्थानान्तरित अथवा पदोन्नति हो जाने पर अस्थाई अवधि के लिए जो भी वरिष्ठ शिक्षक होता उसे चार्ज दे दिया जाता था। यह बात नहीं थी कि प्रधानाध्यापक की योग्यता से नीचे वाले शिक्षक को चार्ज दिया जावे। पर यह उसी को दिया जाता था। जो उस पाठशाला में सबसे लम्बी अवधि तक कुर्सिया तथा छात्रों की हड्डिया तोड़ रहे हों। नई नई छड़िया बनाने के लिए जंगलात द्वारा लगाए गए पौधों की सुकोमल शाखाएं काटे हो। इस ओर कोई ध्यान न देता कि प्रधानाध्यापक की कुर्सी पर बैठकर पाठशाला का शासन चलाने वाला यह शख्स इतने सालो की मास्टरी करने के बावजूद अपनी मातृभाषा में भी शुद्ध रूप से प्रार्थना पत्र लिख सकता है या नहीं।

सो जनाब, होता यह था कि उन महानुभाव को न तो कोई टेरता था न ही कोई उनकी ओर ध्यान देता। वह अक्सर कहा करते कि हमारे बाल धूप में थोड़े पके हैं। वर्षों का तजुर्बा है। वह कायदे कानून से सभी विषयों में माहिर, पहुंचे हुए विद्वान और ऐंठ इतनी कि जैसे पाठशाला के प्रधानाध्यापक न होकर युगांडा के ईदी अमीन हों।

परन्तु हकीकत यह थी कि उस बेचारी कुर्सी पर बैठे एक अदद मुर्दंसर की अनुपस्थिति में सभी अध्यापक बारी-बारी से आकर बैठते और प्रधान मंत्री की कुर्सी पर बैठने जैसा आनन्द और आत्म-संतुष्टि प्राप्त करते।

सो इस प्रकार कुर्सी योग की आपाधापी चलती रही। पढ़ाई भी चलती रही।

इसी प्रकार की आपाधापी में एक दिन हम लोगो ने देखा सभी की साझी कुर्सी नामक उस सवारी पर एक अपरिचित प्राणी आरूढ है। काना-फूसी हुई कि आखिर हमारी पाठशाला की इस साझी सम्पत्ति पर किसी

बाहरी शक्ति का कैसे अधिकार हो सकता है परन्तु लग रहा था कि वह महानुभाव हमारी तरह चोरी छिपे उस कुर्सी पर बैठने वाले जीव नहीं है। लगा कि जैसे महाशय हमारे नेताओं की तरह कुर्सी पर चिपके है। यहां तक सोचा गया कि कोई चोर उचक्का तो नही। यह भी शंका व्यक्त की गई कि कहीं विभाग से कोई अधिकारी तो नहीं आया है।

खैर, सभी ने सलाह-मशविरा किया और समूहवद्ध होकर, (जैसे किसी मोर्चे पर जा रहे हों) जब दरवाजे पर पहुचे तो कुर्सी पर आरूढ़ प्राणी में हलचल हुई। पिचकी गालो की झुर्रियां कुछ खिंची और ऐनक के नीचे बिलाव सी आखें झपकीं। वह उठ खड़े हुए और कमर सीधी करके और फिर दोनो हथेलियों को मेज पर टिका कर बोले, "जैन्टल मेन, आप एम दी न्यू हेड मास्टर आफ दिस स्कूल।"

काफले में जैसे भूचाल आ गया। सभी की आखें उस ठिगने, हड्डियों के ढाचे, स्वयं को नया हेड मास्टर बताने वाले उस शक्स पर नहीं थी पर उस कुर्सी पर थी जिस पर वह बैठा था। सभी को ऐसा लग रहा था जैसे उन्ही के सामने ही उनकी प्रेमिका का अपहरण कर लिया हो। चेहरे रूंआसे से हो गए। किसी के मुह से एक शब्द भी नहीं निकला तो जनाब बहादुर ने खुद खंखार कर कहा, "अजीजो, कृपया तशरीफ रखिए।" हमारे ही घर पर, यह गुस्ताखी ? मेहमान खुद मेजबान बना हुआ है।

यह महानुभाव बड़े जीवट के निकले। एक तो उम्र का तकाजा उस पर ढलती उम्र में शादी। रिटायर होने मे अभी तीन साल बाकी थे परन्तु साहब की पहली पैदाइश अभी डेढ़ साल की थी और साथ ही पत्नी को सातवां चल रहा था। बात बात पर चिढ़ना। जिद्दी इतने कि सुबह पत्नी से उलझ गए हों तो शाम तक न खाए पड़े रहते। काम धाम तो पाठशाला के समय ही निपटाया जा सकता था पर वह दुनिया भर के कागजात मेज पर ही बिखराए रहते और चींटी की तरह न जाने किस काम से व्यस्त रहते। यदि उन्हें कोई पूछ लेता तो कहते, "यू नो, मैं सरकार का नमक खाता हूं और पूरा काम करता हूं।" पत्नी कहती "तभी तो घर में नमक तेल की हर समय किल्लत रहती है। संयम पैदा करने को कहते है। जिस सरकार का नमक खाते हैं उसी से परिवार के लिए जहर मंगवा लो।"

दफ्तर आई पत्नी को वह बुरी तरह डाट पिलाते, "तुम बिना पूछे दफ्तर में आ कैसे गई ? यह तुम्हारा मायका नहीं है जहा तुम जब जी चाहो चली आओ, यह हेडमास्टर का दफ्तर है । गेट आउट, मेरा भेजा मत खाओ ।"

"तुम्हारा भेजा खाकर कितने दिन गुजारा चलेगा ?"

"सुअरेर बच्चा ! गेट आउट आइ से।"

अध्यापक लोग उन्हे समझाने लग जाते । उनके घर की हालत सभी को मालूम थी। अध्यापक कुछ समझाने लगते तो पत्नी का गुस्सा अध्यापकों पर उतारते" व्हाट डू यू थिंक ? आई एम ए मेन आफ प्रिंसिपल । आई एम ए बार्न रेव्ल्यूशनरी।"

"कुर्सी पर बैठकर रेव्ल्यूशन करते हैं।" पत्नी रोती, बच्ची को मेज पर पटक कर चली जाती।

साहब बच्ची को उठाते और किसी फालतू चीज की तरह पाठ्य-पुस्तकों के ढेर पर फेंक देते और चिल्लाते, "सुअरेर बच्चा । इडियट ।" बच्ची बाप को देखकर और जोर से रोने की कोशिश करती पर उसकी घिग्घी बंध जाती । हमारे दयावान अध्यापक बच्ची को उठाते और बाहर ले जाकर चुप कराते—"मत रो मेरे लाल···"

इन महाशय का कोई भी काम व्यवस्थित नहीं है । काम चाहे घर का हो या पाठशाला का, सभी देश की योजनाओं की तरह रेंगते रहते । समय पर तो उन्होंने कोई काम किया ही नही होगा।

हा, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि वह बड़े स्पष्टवादी हैं, निर्भीक हैं । अपने ही एक विशिष्ट तरीके से ड्यूटी बजाना, अपनी सेवाएं देश के लिए अर्पित करने तथा विभाग के लिए अर्पित करने के लिए वह खतरनाक हद तक वफादार हैं। यह बात दूसरी है कि वफादारी की तुलना मे उनकी कार्य कुशलता एव कार्य सचालन उतना ही कम और ढीला है । व्यवहारिकता और समय के साथ चलने जैसी बातें उन्हे सिखाई नहीं जा सकतीं । अगर कोई गुस्ताखी कर भी बैठा तो नाराज हो जाते हैं ।

हो सकता है इसी स्वभाव के कारण उन्होंने अपनी सुनहरी जवानी अकेले ही गुजार दी थी । और जब गालें पिचक गईं, चश्मे का नम्बर भी

बदल गया, कमर टेढ़ी हो गई तो अचानक निहायत रूखे और नीरस व्यक्ति के दिमाग में शादी करने का विचार कैसे आया होगा, यह सचमुच हैरानी और दिलचस्पी की बात है। आज हर सुबह शाम पत्नी को तलाक की धमकियां देने के बावजूद हर साल एक नया सदस्य उनके घर में चीं-चीं करने लगता है।

ऐसे व्यक्ति जो निहायत जीवट के होते हैं और तमाम विरोधाभासों के अपने जीने की पद्धति में परिवर्तन नहीं ला सकते, उन्हें उल्लू भी बड़ी आसानी से बनाया जा सकता है। यह महाशय, खुश मौसमी तौर पर होते हैं अर्थात जैसे साल में एक मौसम आता है, वैसे ही मौसमी मुस्कान या खुशी की रेखाएं उनके झुर्रियों वाले चेहरे पर दिखाई पड़ती हैं, नहीं तो प्रायः चेहरा सूखा ग्रस्त ही रहता है।

इनकी इन्हीं आदतों का फायदा कुछ चालू किस्म के अध्यापक जिनमें हम भी शामिल हैं, उठाते हैं। उन्हें क्रोधित करके हम लुत्फ लेते रहते हैं।

लुत्फ उठाने में भाटिया और प्रधान सबसे आगे हैं। महोदय की मेज से पेपरवेट उठाकर अपनी जेब में डाल लेंगे और जब महोदय पेपरवेट की तलाश करेंगे तो वे अनभिज्ञ से कहेंगे "कहां रखा था सर? यहां? ठहरिए हम खोजते हैं।" और दो अध्यापक कक्षाओं में अपना पीरियड न लेकर पेपरवेट की अर्थहीन तलाश करते वक्त बरबाद करते रहेंगे। तीन पीरियड गुजर जायेंगे पर पेपरवेट नहीं मिलेगा। मिलता भी कहां, खोया हो तब न? महोदय मेज पर प्रहार करते-करते हथेलियां दुखा लेंगे। आंग्ल भाषा में गालियां देंगे। बड़बड़ाएंगे कि पाठशाला में कुछ असामाजिक तत्व सी० आइ० ए० की तरह घुस आये हैं और पाठशाला की न केवल सम्पत्ति इधर उधर कर रहे हैं बल्कि अराजकता की स्थिति उत्पन्न करने जा रहे हैं। वह उसी समय विभाग को इस चोरी की सूचना देने के लिए लिखने बैठते तो कलम भी गायब पाते। उनके बौखलाने पर हम लोग और लुत्फ लेते।

उनकी बौखलाहट और हमारा लुत्फ लेने का नाटक ज्यादा दिन नहीं चला क्योंकि उनका कुछेक महीनों के बाद ही तबादला हो गया। उनके इतने जल्दी स्थानांतरित हो जाने के पीछे कस्बाई चौधराहट और उनकी अपनी उसूलबदी थी। दरअसल वह किसी की चौधराहट सहन नहीं कर

सकते थे। पत्नी ची ची करती तो वह उसे पचास बार तलाक देने की धमकियां देते। गनीमत यह थी कि वह मुसलमान नहीं थे, नहीं तो उन्हें "तलाक" शब्द पचास बार कहने की नौबत नहीं आती। पाठशाला के प्रशासन में वह किसी की दखलन्दाजी सहन नहीं कर सकते थे। यहां तक कि पाठशाला के अहाते में कोई बकरी आ जावे तो उसे बंधवा लेते। बकरी छुड़ाने बकरी का मालिक आता उसे आंग्ल भाषा में ऐसे धमकाते जैसे किसी अध्यापक को डांट रहे हों। भला बकरी वाला गोरों की भाषा क्या समझता। यदि कोई अक्खड़ प्रवृत्ति का होता तो हंगामा मच जाता। बड़ी मुश्किल से हम अध्यापक उनके और बकरी वाले के मध्य सीजफायर करवाते।

उनके इसी स्वभाव के कारण कस्बे के चौधरियों से उनकी आए दिन झड़पें हो जाती। वह किसी को दुआ सलाम तक नहीं करते। अक्सर कहा करते, "हम ऐरे गैरे नत्थू खैरे के आगे क्यों झुकें? हम कोई मिस्टर सेठी थोड़े ही हैं कि बाजार में चने वालों को नमस्कार करें, बनिए को राम राम कहें, झगड़ूमल नीमकचन्द को सादर प्रणाम कहें। हम तो सिद्धान्तों के पक्के हैं। "आई बिलाग टू दि ग्रेट रिव्यूशनरीज ऑफ बंगाल।"

जो भी हो देश पर सत्ता (राजनीति) का दबदबा है, चाहे पाठशाला हो या नगर पालिका। राजनीति का दबदबा चांदी के सिक्कों के साथ जुड़ा है। चट्टोपाध्याय महोदय सिद्धान्तों के पक्के थे, चांदी के सिक्कों की तरफ उनका ध्यान नहीं गया। जिन्दगी भर विभिन्न पाठशालाओं में की हुई तीस साल की नौकरी के बावजूद आज उनके पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं। जिन्दगी इतनी अस्त-व्यस्त कि किसी भी काम को सलीके से से सजो नहीं पाते। परिवार के लिए राशन पानी तक को वह महीना पन्द्रह दिन में न खरीद कर रोजाना खरीदवाने भेजते। स्कूल के चपरासी को एक छोटी सी चिट पर चार सौ ग्राम चावल, एक सौ ग्राम दाल, अढाई सौ ग्राम आलू लिख कर भिजवाते। चपरासी रोजाना सुबह-शाम आता-जाता देखा जा सकता था। प्रत्येक माह सौ दो सौ का ऋण लग जाता ईमानदार इतने कि स्कूल फंड में हजारों रुपये पड़े रहते पर बारह महीने पैसों की तंगी में रहने वाले हमारे प्रधानाध्यापक महोदय चपरासी से एक चिट भिजवाते "मिस्टर फनाना, प्लीज सेंड मी अ चिट ऑफ फाइव

रुपीज़।"

उनके साथ हमारा सम्पर्क ज्यादा दिन नही रहा। कस्बे की राजनीति के पुण्य प्रताप तथा अपने अड़ियल स्वभाव की बदौलत उनका तबादल हो गया।

काफी दिन तक पाठशाला मे फिर अध्यापकों ने कुर्सी-भोग का आनन्द लूटा। इसी बीच एक दिन हम खुद समय पाकर कुर्सी भोग कर रहे थे कि डाकिया हमें एक चिट्ठी थमा गया। पढ़ी तो पता चला कि तबादलों के सिलसिले में हमारा भी नम्बर आ गया है। हमारा तबादला हो चुका था। और अमुक दिन हमें अमुक पाठशाला में अपनी मौजूदगी बाकायदा हाजिरी रजिस्टर पर दस्त (खत) करके सिद्ध करनी थी।

तीन

इस नई पाठशाला में आकर वकील एक देश के राजदूत की तरह हमने अपने पद के प्रमाण-पत्र पाठशाला के सबसे बड़े मौजूदा अधिकारी को सौंपे। अधिकारी महिला थी, शादीशुदा थी, शादीशुदा होने का प्रमाण उनके साथ बहती नाक की, बिना चड्ढी चढ़ाए उनकी पांच-छः साल की एक अदद बच्ची थी और वह अपनी स्वाभाविक मुद्रा में प्रधानाध्यापक के गौरवशाली सिंहासन पर विराजमान होकर बच्ची को स्तनपान करा रही थी। हमारे वहां पहुंचने पर उन्होंने बाकायदा हमारी उपस्थिति को नजर-अन्दाज कर दिया और बच्ची को स्तनपान कराने के साथ-साथ पाठशाला के प्रशासन में भी हाथ बंटाती रही। कुछ चमचे से लगते चुगन्दर से मास्टर तथा कुछेक शादीशुदा मास्टरनियां अपनी जांघें खुजला रही थीं और पाठशाला की समस्याओं पर वे सभी गम्भीर मुद्रा अख्तियार करके बैठे थे।

जब हमने पद के महत्वपूर्ण कागजात मैडम को सुपुर्द किए तो उन्होंने कागजातों को मेज की दराज में डाल दिया और कहने लगी, "तुम्हारे आने का पता हमें पहले ही लग चुका था। दरअसल तुम्हारी ट्रांसफर हमारे बहनोई ने करवाई है। हमें एक हिन्दी टीचर की जरूरत थी।"

"मैं तो विज्ञान शिक्षक हूं। पिछली पाठशाला में मैं विज्ञान पढ़ाता रहा हूं। और यहां भी मैं विज्ञान ही पढ़ाऊंगा।" हमने कहा।

"जो कुछ भी पढ़ाओ, क्या फर्क पड़ता है।" उन्होंने लापरवाही से कहा और बच्ची के मुंह में दूसरा स्तन डाल दिया।

तो पहले ही दिन जब उनसे साक्षात्कार कर हम एक टूटी-सी कुर्सी पर विराजमान होकर एक प्रौढ़ा-सी पर आकर्षक शिक्षिका से परिचय बढ़ा रहे थे तो मैडम उठीं क्योंकि बच्ची ने उनके कपड़ों पर दीर्घशंका कर दी थी और उसे धोने के लिए वे ग्राउण्ड में लगे नल पर चली गईं। बच्ची को घुमाकर सीधी क्वार्टर में चली गईं। जब वह एक घण्टे तक नहीं आईं

तो हमने अन्य अध्यापको की तरह यहा भी बारी-बारी से कुर्सी भोग का आनन्द लूट लिया। उसी समय आधी छुट्टी हो रही थी बच्चों ने जब हमें उस सौभाग्यशाली कुर्सी पर विराजमान पाया तो वे कानाफूसी करने लगे कि पाठशाला में नए प्रधानाध्यापक आ गए हैं।

जिन-जिन प्रधानाध्यापको के मातहत हमने मास्टरी की है, उनमे यह मैडम वाकई लाजवाब हैं। वैसे वह प्रधानाध्यापिका खाक भी नही हैं पर सरेआम अपना परिचय पाठशाला की प्रधानाध्यापिका के रूप मे ही कराती हैं। हमारा यह सस्कारी चरित्र है कि हम एक छोटे-से ओहदे पर भी पहुच कर व्यवहार और कार्यकलाप में फर्क महसूस करने लगते हैं।

चाहे यह प्रधानाध्यापिका नही है पर उन्होंने उसी दिन अपने नाम की रबड स्टाम्प बनवा ली थी जिस दिन उन्हें पाठशाला का चार्ज मिला था।

पाठशाला चल रही है चलती रहेगी। उसकी रफ्तार मे कोई फर्क थोड़े ही पड़ता है।

उनके व्यवहार, व्यवस्था तथा प्रशासन का अपना निजी दृष्टिकोण है। जहा तक पाठशाला के अनुशासन, प्रधानाध्यापिका के व्यक्तित्व तथा गरिमा का अथवा छात्र-छात्राओ के सामने एक आदर्श प्रस्तुत करने का प्रश्न है, इन बातो के पचडे मे वह कभी नही पडती। प्रधानाध्यापक की विवादास्पद कुर्सी पर बैठी वह जब कभी गर्भवती शिक्षिकाओ से बतियाती अपने शौहर के कच्चे-चिट्ठे प्रस्तुत कर रही होती तो उनके गोद की बच्ची जिसके शरीर पर मात्र गजी होती, मुंह गदा, टट्टी से लथपथ चूतड़ लिए आती तो वह उसे पकडकर पाठशाला के नल पर ले जाती और चूतड़ धो देती पर मुह नही धुलाती। फिर उसे उठाकर स्तन मुंह मे दिए तीसरी कक्षा में घुस जाती। जिस कक्षा की शिक्षिका गर्भवती होने के कारण प्रधानाध्यापिका के कक्ष में बैठी होती और बच्चे हंगामा मचा रहे होते, वह दो-तीन बच्चों को लात जमा देती और श्यामपट पर खड़िया से लिखती "सदा साफ रहो" बच्चों को कॉपी का पूरा पृष्ठ लिखने की हिदायत देकर बच्चे को स्तनपान कराती अपने कक्ष मे चली जाती।

जिस कक्षा मे उन्होंने लिखने का काम दिया होता, दो ही मिनट में उनके कक्ष के आगे छात्र कॉपियां लिए खड़े हो जाते हैं। "मैडम, हमने

लिख लिया है।" और एक ही साथ दस-पन्द्रह लड़के-लड़कियाँ उनके कक्ष मे घुसकर उन्हे घेर लेते। उनमे यह होड़ लग जाती कि पहले कौन दिखाए। आखिर मैडम गर्भवती शिक्षिका की ओर देखती। गर्भवती शिक्षिका कहती—"यहां कापियां रखकर चुपचाप क्लास में बैठ जाओ।" बच्चे चुपचाप बैठने के लिए शोर मचाते चले जाते।

इधर इस पाठशाला में मैडम के साथ हम पाठशाला मे बच्चो का "चरित्र-निर्माण" कर रहे है। यदि बच्चे अनपढ ही रहते तो कम-से-कम अपने-अपने घरो का कुछ काम तो करते। पर यहां पाठशाला मे दस बजे से चार बजे तक शिक्षित होने के स्थान पर बच्चो पर जो प्रभाव पड़ता है, वह देश के भविष्य के लिए कितना लाभदायक है यह तो आप जानते हैं न! जो निहायत शरीफ और दब्बू किस्म के बच्चे होते हैं, वह जब स्कूल मे सामूहिक रूप से रहते है तो माहौल के अनुसार कुछ "शुद्ध और पवित्र" शब्द भी सीख लेते हैं जो भविष्य मे कानून के रक्षक पुलिस विभाग में शामिल होने के लिए लाभदायक सिद्ध होते हैं। कुड-फू और ब्रूस-ली के पदचिह्नों पर चलने के प्रयास मे लग जाते हैं। सामूहिकता की भावना, सामाजिक व्यवहार और एकता के उदाहरण आज हम उच्च स्तर पर जो राष्ट्रीय नेताओ के बीच देख रहे हैं, उन्हे इन नेताओ ने बचपन मे स्कूल में ही सीखा है, इस बात की हम गारन्टी दे सकते हैं। नेताओं को तो सार्वजनिक रूप मे विरोधियो को गालियां देनी ही पड़ती हैं अत: होनहार बिरवान के होत चीकने पात के लक्षण पहले ही उनमे दिखाई पडते हैं। बच्चे यहीं से गालियों की ट्रेनिंग ले लेते हैं। जो ज्यादा झगड़ालू या दादागिरी करने वाला हुआ, उसके बारे मे भविष्यवाणी अभी से की जा सकती है कि वह किस विभाग के अनुकूल है।

यह सर्वविदित सत्य है कि पाठशाला ही भविष्य के महापुरुषों को बनाने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र हैं। उनको वास्तविक भूमिका हम 'सुयोग्य' अध्यापको और अध्यापिकाओं के सामूहिक प्रयास से तैयार कर रहे हैं। धर्ड होकर लड़कियां को दहेज के कारण कुंवारी रहने के त्रास मे स्वयं को भुलसाना पड़ता है। अत: वे वय: सन्धि पार करते-करते अपने-अपने सहपाठियो को प्रेम-पत्र लिखने लग जाती हैं। लड़के भी फिल्मी

अभिनेताओं की तरह रूमानी प्रेम मे डूब जाते हैं। किताबों के बीच सस्ते उपन्यास और घटिया रोमांस की पत्रिकाएं होती हैं और पांचवी कक्षा में पढ़ती अधिकांश लड़कियां ड्राइवरों के साथ भाग जाती हैं।

आए दिन पाठशाला में मैडम के पास ऐसे कई केस आते हैं जो खालिस फिल्मी प्रकार के रोमानी प्रेम के किस्से होते हैं। इसी प्रकार का एक मामला हमारी आंखो के सामने से गुजरा :

आधी छुट्टी हुई थी। हम खाना खाने अपने-अपने क्वार्टरों में गए थे। मैडम का क्वार्टर चूंकि पाठशाला के पास ही है अतः वह किसी समय जाकर खा आती हैं और बाकी समय स्कूल की जवान लड़कियों तथा अध्यापिकाओं से गप्प लड़ाती रहती हैं। जवान छात्राओं और अध्यापिकाओं को यौन-सम्बन्धी हिदायतें तो मैडम स्वयं ही देती हैं। बिना पाठ्यक्रम के इस विषय पर बड़ी खास किस्म की हिदायतें वह उन्हें देती है। साथ ही अपनी जवानी के कई किस्से तथा अनुभव भी उदाहरण के रूप में पेश करती हैं।

हां, तो हम खाना खाकर आए तो देखा मैडम कुर्सी में धँसी हैं। उनकी कुर्सी पर बैठने की मुद्रा विश्व की महिला प्रधानमन्त्रियों की मुद्राओं से मिलती-जुलती है। हम लोगों ने सोचा जरूर कोई संगीन मामला है। हम पास की बैंच खींचकर बैठ गए और नजर मैडम के चेहरे पर गाढ़ दीं। दोनों ओर पंक्तियों में लड़के और लड़कियां अपराधियों की तरह नजरें झुकाए खड़े थे।

अचानक मैडम की गंभीर मुद्रा में एक भीषण विस्फोट हुआ हमने जो सुना वह इस प्रकार है "अब बोलो, सूअर के बच्चो, तुममें से किसको ज्यादा जवानी की पीड़ा सता रही है, राजू?" मैडम राजू की ओर मुखातिब होती हैं।

राजू कनखियों से सामने वाली लड़की की ओर देखता है, वह मुस्करा देती है।

"बोलता क्यों नहीं रे? मजाक समझ रखा है यह स्कूल? न कोई सार्वजनिक पार्क है, जहां तुम आशिकमिजाजी करते रहो और सिरों पर चढ़कर हमें अपनी बीती हुई जवानी की याद दिलाओ?

कभी जवान थे। हमें भी जवानी का रंग चढ़ा था। हमने भी प्रेम किया है, विवाह किया है, बच्चे जने हैं। पर तुममें से किसी ने कभी अपनी शक्लें आइने में देखी है?"

राजू का चेहरा लाल हो जाता है और वह दूसरी तरफ मुंह फेर लेता है।

मैडम अब लड़कियों की ओर मुखातिब होती है। पांच लड़कियां हैं जिनकी उम्र ग्यारह साल से चौदह साल के बीच है।

"—तू बता राधा, किसके साथ शादी करेगी? मैडम ने खड़े लड़कों की ओर इशारा करके पूछा—राजू से? दीपू से? इस बौने महाराज से?"

बौने महाराज का नाम सुनते ही सभी लड़के-लड़कियां हंस पड़ते हैं। दरअसल यह बौने महाराज हमारी पाठशाला के हास्य अभिनेता तो हैं ही, साथ ही अपनी विशेष स्टाइल में हर समय रोनी सूरत बनाए रखते हैं। राधा बांस की तरह लम्बी और चौदह साल की है। प्रत्येक कक्षा में दो से कम साल नहीं लगाती। इस उम्र में भी तीसरी कक्षा से आगे बढ़ नहीं पाई है। डेस्क के नीचे रोजाना कोई उपन्यास पढ़ती वह देखी जा सकती है। उसके कई प्रेमपत्र प्रधानाध्यापिका के हाथ पड़े हैं। अन्तिम चेतावनी कई बार दी गई है। पर यह है मां की लाडली कि हर रोज डाक से उसके किसी-न-किसी प्रेमी का पत्र आता ही रहता है। उसी को मैडम ने बौने से शादी करने को कहा था।

"—बेशर्म कहीं की। अभी शरीर पर मांस चढ़ा नहीं, जवानी छलकने लग गई।"

हम लोग जो कि इस प्रस्तुतिकरण के दर्शक मात्र थे, चुपचाप कभी उन भविष्य के मजनुओं की ओर देख रहे थे, तो कभी मैडम की ओर।

उस समय किस रस की उत्पत्ति हो रही थी यह तो कोई रस विशेषज्ञ ही बता सकता था। एक ओर वयः सन्धि की कगार पर खड़ी किशोरियां और किशोर, दूसरी ओर सात बच्चों की मां मैडम, जो उनके गंभीर मामले पर विचार करके अपराधियों को सजा देने की कोशिश में थी। पर सजा देने का उनका निजी तरीका था। वह इसका इस्तेमाल करके अपराधियों

की राय लेना चाहती थी।

"—हा, जो-जो अभी जिस-जिस लडके अथवा लडकी के साथ शादी करना चाहता है, वह अपना-अपना हाथ उठाए।" मैडम ने कागज खीचा और पेन की रोशनाई भाड़कर प्रतीक्षा करने लगी।

करीब पाच मिनट तक जब किसी के मुह से एक शब्द भी नहीं फूटा तो मैडम का पारा सातवें आसमान पर चढ गया।

"—हराम की औलादो। मैं चाहती थी कि तुम्हे आशिकमिजाजी के लिए लाइसेन्स दिलवा दू पर तुम लोग चाहते नही हो न? पर याद रखो, पहले अच्छी तरह से अपने-अपने थोबड़ो को किसी जोहड के पानी मे धोकर शीशे में अपनी शक्लें देखो फिर कभी आशिकमिजाजी करना।" वह मुंह बनाकर सभी को चिढाती हैं।

"—दफा हो जाओ, नामाकूल, डूब मरो। आशिकी करो या चोरी-चपाटी पर हमारा भेजा मत चाटो। मैंने क्या तुम सभी का ठेका ले रखा है कि यहां प्रेम की ट्रेनिंग करवाऊं?"

संभावित शादिया टल गई और जोड़े दौड़कर अपनी-अपनी कक्षा में जाकर बैठ गए। मैडम हमारी ओर मुडकर बोली, "—अब तुम ही बताओ डोंगरे भाई, साली यह जवानी भी क्या चीज है? इन नालायकों को कुछ आता-वाता है नही, अन्धेरे मे लाठिया भाजते हैं।"

"—मगर मैडम क्या आप बताएगी कि इन बच्चियों और बच्चो का आप सामूहिक विवाह क्यो करवा रही थी?" हमने जिज्ञासावश पूछा।

"—करतूतें सुनी हैं, इन मासूमो की? रमेश के पीछे हुआ है यह सब?"

"—कौन वह रमेश राय?"

"—हा।" मैडम ने हमारी आखो में आंखें डालकर कहा और पीठ खुजलाने लग गई।

"—तो क्या वह ज्यादा वदमाशिया करने लग गया है?"

"—नही वरखुरदार, वात दरअसल यह है कि यह कृष्ण कन्हैया है और जितनी लड़किया यहा खड़ी थी वे सभी इसकी गोपियां।"

"—आप नाहक पहेलियो में उलझा कर हमारे सब्र का बांध तोड़ रही

है। इस रहस्यात्मक गुत्थी को सुलझाइए। संशय के परदे उठाइए।" हमने कहा। "—क्यों वे मजनू, तुम्हे भी अपनी पहली इश्क मिजाजियों की याद आ रही है क्या? पर यहा तो बात ही दूसरी है। पर है बड़ी उम्दा।"

"—बहिन जी, कहिए भी। हमारा सब्र का बांध टूट रहा है। कहीं बाढ़ आपको भी न बहाकर ले जाए।"

मैडम के झुर्रियों वाले चेहरे पर तनिक लालिमा तैर गई।

"—तो सुनो कान खोलकर और दिल थामकर। इसको कहते हैं, कलयुग। कहीं तुमने सुना है कि एक लड़के पर चार लड़कियां दीवानी हों और प्रतिस्पर्धा में जलती रहती हों। यहां तक कि आपस मे समझौता भी कर लें कि रमेश मेरा है, तू उससे दूर चली जा। ये तीनों-चारों रमेश को अपना असली प्रेमी जताती है, और समझती थी। बात कुछ बिगड़ जाने पर खींचा-तानी हो गई। रमेश कृष्ण कन्हैया की तरह निर्लिप्त होकर आश्वासन दे रहा था। एक ने दूसरी की पोल खोल दी, प्रेमपत्र दिखाने की धमकियां दी। क्लास में एक-दूसरे के झोंटे खींचे, रोई, चिल्लाई और अन्त मे बात मेरे पास आनी ही थी न, सो काफी आ गई। पहले तो मुझे काफी हंसी आई और मैं काफी दिनों के बाद खूब जोर से दिल खोलकर हंसी। सोचा बेचारियां प्रेम के मामले मे इतनी तड़फ रही हैं। क्यो न इनकी सामूहिक शादियां करवाकर नाम कमा लूं ताकि स्वर्ग का पासपोर्ट मिल जाए। मैं यही करने जा रही थी।" मैडम ने इतना कहा और खिड़की की ओर झुककर मुंह मे आया बलगम थूक दिया।

"तो यह बात थी।" हमारी हंसी फूटी और जी भर कर हंसे। हंसते-हंसते पेट मे बल पड़ गए। आंखो में आंसू आ गए और हमारे इस प्रकार हंसने से प्रधानाध्यापिका के कक्ष के सामने क्लासो से बच्चे निकलकर हुड़दंग मचाने लग गए।

"चार्ज" शब्द बहुत उच्चकोटि का शब्द है जनाब, और उच्चकोटि का होने के साथ-साथ बड़ा आकर्षक भी है। जिसे प्राप्त करने के लिए तरह-तरह के पापड़ बेलने पड़ते हैं। प्रधानाध्यापिका चकि "चार्ज" पर है अतः चार्ज होने पर भी जैसे देश की बड़ी सरकार बिना बैटरी के चार्ज से चल रही है उसी प्रकार एक मैडम के संरक्षण में हमारे स्कूल के बच्चे प्रशिक्षण

ले रहे हैं। यह प्रशिक्षण कैसा है और इस प्रकार का प्रशिक्षण पाए बच्चे भविष्य में किन-किन मोर्चों को सभालेंगे ये तो उनकी विकलाग शक्लें ही बता देती हैं। जो भी हो, ये अपने-अपने मोर्चे सभालने में सक्षम हैं।

कल की ही तो बात है जो मैंने आपको बताई थी। इस पाठशाला का औसत लड़का और लडकी जब चड्डी की इंजार बांधने में समर्थ हो जाता है तो इश्क और प्रेम नामक इन्द्रजाल में भटकने लग जाता है। इस इन्द्रजाल मे उन्हे भटकाने मे हमारी हिन्दी फिल्में बडी वफादारी से अपनी भूमिकाएं अदा कर रही हैं।

मैडम चूकि शिशु-मनोविज्ञान में माहिर है अतः कभी बच्चो की छोटी छोटी हरकतो मे दिलचस्पी नही लेती। बल्कि इन छोटे-छोटे मामलों के लिए उनकी ओर से खुली छूट है। छात्र-छात्राओ को तो छूट है ही, कुवारे शिक्षको के लिए भी उनकी सेवाए उपलब्ध है। बात ठीक ही है, देश के नागरिको को सभी क्षेत्रो मे बनाने के लिए चूकि पाठशालाओ की भूमिका निर्विवाद है अतः मैडम अपनी सेवाए पूरी वफादारी से अर्पित कर रही हैं।

हम चूकि दुर्भाग्य से अब शादीशुदा हो गए हैं अत: इस क्षेत्र में पदार्पण करने वाले योद्धाओ के प्रति बेहद सवेदनशील हैं और एक सीमा तक सहनशील भी।

उस दिन हमारी पाठशाला के एक निहायत उतावले शिक्षक, जो श्रेणी मे एक शब्द पढ़ाकर नीचे की ढलान से होकर बाजार घूमकर आ जाता और एक मिनट के लिए भी स्थिर होकर नही बैठता था, उसे बेहद उतावले देखकर हमने पूछा "बरखुरदार, क्यो इतने उतावले दिखते है!"

उसने पेन्ट का एक पाइंचा घुटने तक मोड़ रखा था और हवाई चप्पल पहन रखी थी, हाथ मे ली छडी हिलाते बोला "मि. डोगरे, मुझे एक मिनट भी बैठने का सब्र नही। इतनी छटपटाहट है कि चैन नहीं। क्या करू?"

"तुम जल्दी ही शादी कर लो।" हमने हमदर्द होकर सलाह दी। जबकि हम अपने भुक्तभोगी होने की प्रतिक्रिया जाहिर करके एक परपीड़नभोगी का-सा अभिनय कर रहे थे। उसके इतने उन्मुक्त जीवन से हमें काफी चिढ हो रही है अत: उसे शादी करने की सलाह हमने दी।

तीसरे ही दिन जब हम अपने दौलतखाने से निकलकर बाजार से नून-तेल-दाल का जुगाड़ करके आ रहे थे कि वही शिक्षक और सुग्गे की तरह नाक वाली शिक्षिका घूमते से मेरे सामने आकर खड़े हो गए और बोले "आशीर्वाद दीजिए।"

"तथास्तु !" अचानक हमारा हाथ बारी-बारी से उनके सिरों पर पहुंच गया और एक आत्मसंतुष्टि की सांस ली। काफी खुश भी थे कि बच्चू अब हमारी तरह भोगेगा। सारी हेकड़ी निकल जाएगी।

वे हमारी (बद्) दुआएं लेकर नदी की ओर चले गए।

'''प्रधानाध्यापिका ऐसी नहीं है कि निहायत सख्त हों। वह काफी हद तक सहृदय है और किसी तरह की सख्ती न तो वह छात्र-छात्राओं पर व्यक्त करती है न शिक्षक-शिक्षिकाओं पर। रोजाना उनके कक्ष में वह गर्भवती शिक्षिकाओं को परिवार-नियोजन पर भाषण देती पर देखा जाता है कि स्वयं हर साल उनके पांव भारी हो जाते। जरूरतमन्द शिक्षिकाओं की छुट्टियां मन्जूर कर देती। किसी शिक्षिका का किसी शिक्षक से रोमांस चल रहा हो तो उन्हें खुली छूट दे देती और कुछ बुनियादी हिदायतें भी दे देती। शिक्षिकाओं से बातों का एक दिन का कोटा खत्म हो जाता तो उन्हें मीठी झिड़की देकर कक्षाओं में भेज देती और फिर शिक्षकों की बारी आती। किसी युवा शिक्षक को बुलाकर उसे अपनी युवावस्था के प्रेम के किस्से सुनाती। किस्से इस सीमा तक रसमय होते कि बिहारी की नायिका का पूरा वर्णन हो जाता। और विपरीत लिंगी से सुने उन सामिष (!) प्रसंगों को सुनते युवा शिक्षक कुछ ज्यादा ही रस लेते।

चार

नयी पाठशाला मे हमारा स्थानान्तरण हुए करीब चारेक माह ही हुए थे कि पिछली पाठशाला मे प्रधानाध्यापक की कुर्सी फिर खाली हुयी। नए प्रधानाध्यापक बड़े ही उत्कृष्ट किस्म के जीव निकले। इन महाशय के बारे में काफी कुछ सुन रखा था। उनके उस पाठशाला में आने पर हमे न तो खुशी ही हुई न ही गम। हम ठहरे "कोऊ नृप होइ हमे का हानी" वाले विचारो के। उनके आने पर पिछली पाठशाला के इतिहास मे एक नया अध्याय जुड गया। चूंकि वह अपने नाम का सिक्का तो चला नही सकते थे बीसवीं शताब्दी मे, पर इसी प्रकार के आधुनिक चालू सिक्को की उन्होने अपनी जिन्दगी के अनुभवों के आधार पर टकसाल चलानी शुरू कर दी। पाठशाला का एक-एक वर्ष का रिकार्ड नए तरीके से बना, पुराना रिकार्ड सभी रद्दी के भाव बेचकर उन्होने नाश्ते के लिए अंडे और टोस्ट मुहैया किए। पैसे बनाने की कला मे वह इतने माहिर रहे हैं कि उन्हे कोई चित्त नही कर सकता। मैं सरकार को उन्हें वित्त मंत्रालय दिलाने की सिफारिश करता हूं।

नित्य नई ईजादें हुई और कुछ चमचे किस्म के शिक्षक भी उनके चरणचिह्नो पर चलने लग गए क्योकि यह तो राष्ट्रीय चरित्र की गरिमा है। वफादारी जितनी हमारे बीच है कही और मिले तो हमारे कान खीच लीजिए। ऐसे चरित्रो के लिए तो कोई भी पार्टी हो या बैनर, गिरगिट की तरह रग बदलकर स्वयं को भी उसी माहौल के सांचे में ढाल सकते हैं।

हुआ यह कि हम ठहरे ऐसे व्यक्ति जिनके साथ सरस्वती ने तो साथ दिया ही नही, लक्ष्मी ने भी साथ नही दिया। आप कहेगे कि यह कम्बख्त किन्ही लड़कियों के नाम गिना रहा है जो इसकी भूतपूर्व प्रेमिकाएं रह चुकी होगी और अब चूंकि वे इसे धोखा देकर अन्य किन्ही प्रेमियों के साथ गुलछर्रे उड़ा रही हैं और यह "खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे" वाली मुद्रा में अपने दिल की भड़ास निकाल रहा है। नही जनाब, ऐसी बात नही है।

सरस्वती याने विद्या। पढ़ाई लिखाई मे रहे हम अधरे (वैसे शिक्षक के सम्माननीय पद पर पिछले दस सालो से सुशोभित हैं) लक्ष्मी याने धन। धन बहादुर ने भी हमारा साथ नही दिया। जब हमारी बेटी पिंकी इस पुण्य भूमि भारतवर्ष मे पैदा हुई थी तो हमारी जेब खाली थी। राशन वाले ने उधार देना बद कर दिया था क्योकि पिछले दो महीनों का बकाया चुकता नही किया गया था। हमने स्कूल मैनेजिंग कमेटी से कुछ रुपये बतौर कर्ज लिए थे। वही रुपये हम अभी तक नही लौटा पाये थे। पैसे चूंकि स्कूल फड से नही लिए थे अत पिछली पाठशाला को छोडते समय चार्ज देते समय उन रुपयो की चर्चा नही चली। हा, हम पाठशाला की एक छोटी मेज और एक अदद टूटी कुर्सी डकार गए थे। यह डकारी हुई सम्पत्ति आज तक मेरे पास सुरक्षित है। डकारने का गुर हमें उसी पाठशाला के एक भूतपूर्व प्रधानाध्यापक ने सिखाया था। जो रुपयों का पचड़ा था उसे तो मैनेजिंग कमेटी को लौटाना था अत हमे रिलीविंग सर्टिफिकेट मिल गया था।

इस पाठशाला मे आकर हम आश्वस्त थे कि चलो कमेटी वाले हमें चिट्ठियां ही तो लिखेंगे कि रुपये लौटा दो। कोई माई का लाल मुनीमो की तरह तकादा करने थोडे ही आवेगा।

पर बात कुछ अलग प्रकार से घटित होने वाली थी। प्रधानाध्यापक जो मनोविज्ञान, ज्योतिष तथा न जाने किस-किस विज्ञान के परले दर्जे के पहुंचे हुए विद्वान हैं, उन्हे यह पता लगाने मे कोई देरी नही लगी थी कि किस-किस अध्यापक ने कितना रुपया मैनेजिंग कमेटी से कर्ज लिया है। उन्होंने जो करना था किया और हमने अपने अनुसार काम किया क्योंकि यदि वह पहुंचे हुए विद्वान थे तो हमे आधे रास्ते तक ही पहुंचे हुए समझ लीजिए। पर हम हैं किसी हद तक पहुंचे हुए ही। आप चाहे तो आजमा कर देख सकते हैं।

उनसे यह मेरी पहली मुलाकात थी। मुलाकात अचानक नही हुई और न ही उनसे मुलाकात करके स्वय को बड़ा बनाने का सकल्प किया था। मारूमार अपनी कुटिया मे ट्यूशन के बच्चो को ड्योढ़े के पहाड़े सिखा रहा था कि दरवाजे पर दस्तक हुई। उठे तो एक सज्जन को खड़े पाया।

उन्होंने बताया कि उनके दौलतखानेनुमा होटल मे अमुक पाठशाला के प्रधान अध्यापक आपसे मिलना चाहते है। हमारा माथा ठनका। सोचा क्यो हम नाचीज को याद किया है। खैर गए।

वह एक कुर्सी मे धंसे थे। उन्हे पहले देखा नही था। उनके बारे में क्या कुछ नही सुना था पर साक्षात दर्शन आज ही हो रहे थे। हम जाकर उनके सामने खड़े हुए तो उन्होंने सामने वाली कुर्सी पर बैठने का इशारा किया। बैठ गए तो उन्होने बिना किसी भूमिका के आदतन आंखे मूंदकर दायां हाथ आगे बढ़ाकर कहा—"प्लीज गिव मी हन्ड्रेड रूपीज।"

हमारी त्योरियां चढी। पूछा किस खुशी में? उन्होंने उसी लहजे में आंखें बंद करके कहा, "आपने यह अदद रकम मैनेजिंग कमेटी से बतौर कर्ज ली है।"

"किस मैनेजिंग कमेटी से?" हमने साश्चर्य पूछा।

"स्कूल मैनेजिंग कमेटी···पाठशाला से।" उनकी आंखें अब भी बंद थी।

"पर मैं ये रुपये आप को क्यों दूंगा? मैंने तो ये कमेटी के सचिव से लिए है।"

"मैं उस समिति का नया सचिव हूं।"

बात अब हमारे पल्ले पड़ी। हमने नम्र होकर कहा—"हुजूर अभी तो हमारी जेब में फूटी कौड़ी भी नही है।"

"क्यो आपकी पत्नी भी तो सर्विस करती हैं।" उन्होने आखें खोल कर कहा।

"पत्नी ही नही, मेरे अब्बा जान, अम्मी और भाई भी सर्विस करते हैं। पर उनसे आपको क्या लेना है?"

उन्हें लगा कि शिकार को फांसना इतना आसान नही है जितनी उन्हे आशा थी।

उन्होने आखें मूंद कर कहा, "अगले माह के पहले हफ्ते रकम हमारे पास पहुच जानी चाहिए। हमने स्थानीय पाठशाला की लेट्रिन के लिए तथा पाठशाला के गरीब लड़को के लिए स्थानीय संभ्रात व्यक्तियो की मदद से एक ट्रस्ट स्थापित किया है। सर्वसम्मति से हम उसके भी अध्यक्ष हैं।"

हमने उन्हें उनके बुजुर्ग होने के नाते प्रणाम की मुद्रा में कुछ कहा। वह गाली भी हो सकती है। हम बाहर निकल कर आए। वह भी बाहर आए और हुक्म दिया कि किसी वाहन का इंतजाम करो।

"आप यही ठहरें। मैं अभी वाहन का इंतजाम करके आता हूं।" इतना कहकर मैं दूसरी गली से होकर अपनी कुटिया में आ गया और दरवाजा भीतर से बोल्ट कर दिया।

हमने सोचा था कि इतने में ही उनसे हमारी छुट्टी हो गई। पर हमारी धारणा गलत निकली। अगले माह का पहला सप्ताह चल रहा था कि अचानक उनसे साक्षात्कार हो गया। हम सपत्नीक सब्जी खरीदने गए थे। सब्जीमंडी पास ही थी। अत: घर को ताला नहीं लगाया था। सब्जी खरीदकर जब लौट रहे थे तो देखा दरवाजा खुला है और घर बुहारने का झाड़ू दरवाजे के पास खड़ा करके रखा है। दौड़कर अदर घुसे तो देखा कि जनाब समाधि की मुद्रा में कमरे की एकमात्र कुर्सी पर विराजमान हैं। हमारे आगमन का आभास उन्हें हो गया था अत: आंखें बद किए ही बोले, तुमने बंदूक दरवाजे पर क्यो रख छोड़ी है?"

उनका इशारा झाड़ू पर था। उन्होंने शायद इस स्वनिर्मित मजाक से हमें हंसाना चाहा था परन्तु हास्यरस की उत्पत्ति के स्थान पर रौद्र रस का आभास हमें हुआ। पत्नी की चढ़ी त्यौरियों को देखकर हमने कहा कि अमुक जनाब हैं। पत्नी कुछ ठंडी पडी, नही तो वह सिंह राशि की है।

उनके आने का मकसद हमसे छिपा नही था। उन्होंने काफी देर तक हमें बातों में उलझाए रखा। एक हमदर्द होने की उन्होंने पूरी कोशिश की और हमें कहा, "तुम इस मास्टरी को छोड दो और कुछ पैसा कमाओ।"

"जनाब नौकरी छोड़ देने से कैसे पैसे कमाए जा सकते हैं?" हमने नासमझी से पूछा।

"तुम्हें मैं आबकारी विभाग मे नौकरी दिलवाए देता हू, बस पैसे ही पैसे हैं।" उन्होंने ध्यानस्थ होकर कहा।

"पर यह तो अच्छी बात नहीं है।" हमने अपनी शुद्ध शाकाहारी ईमानदारी प्रकट की।

"तुम निपट गंवार हो। ऋण लेकर घी पियो। इस कहावत को

जानते हो ?"

"पर एक सो के ऋण पर आप दूसरी बार तकादा करने आ गए हैं। इससे ज्यादा लिए तो जीना मुश्किल हो जायेगा।

उन्होने हमे प्रभावित करने के अंदाज से कहा, "बरखुरदार, तुम्हे कुछ गुर सिखाने की जरूरत है। क्यों न तुम ट्रांसफर करवाकर मेरी पाठशाला में आ जाते ?"

"पर वहां से कुछ ही महीने पहले आया हूं।"

"यह कोई बडी मुश्किल बात नही है तुम्हारे लिए। मैं खुद विभाग से लड़ूंगा। बेटी लतिका को कह दूंगा वह निदेशक से बात कर लेगी। तुम्हें पता ही है वह उसकी पी० ए० है।"

"जी, हमें पता है। पर आप हम पर इतने मेहरबान क्यों हो रहे हैं ?" इतने मे पत्नी चाय लेकर आ गई थी। बातों का सिलसिला टूट चुका था। उन्होंने एक भरपूर नजर हमारी पत्नी पर डाली और आंखें बंद कर कुछ सोचने लगे। अचानक आंखें खोलकर बोले, "बहिन, जरा अपना हाथ तो दिखाना।"

वह मेरी पत्नी का हाथ अपने हाथ में लिए सहलाते रहे और हम आग बबूला हुए दांत भींजते रहे।

काला कलूटा गंजी खोपडी, काला सूट, शरीर के आयतन से भी ज्यादा निकली तोंद, बड़े-बड़े ओंठ, मोटे फ्रेम के चश्मे के अंदर बिल्ली जैसी आंखें जो पल भर के लिए खुलती और सामने वाले को तौल कर फिर बंद हो जाती।

उनकी इस हरकत से मैं वैसे ही आग बबूला हो उठा था। पत्नी भी जल-भुजकर कोयला हो चुकी थी। अचानक उनकी आंखें खुली और ओठों पर हरकत आयी, "बहिन तुम और तुम्हारे शौहर पर संकटों के बादल मंडराने वाले हैं। तुम व्रत रखा करो। चींटियों की बांबियो मे आटा डाला करो। यदि तुम कल परसों तक मेरे खास स्थान पर आओ तो मैं तुम्हारे लिए एक तावीज दूंगा जिससे तुम्हारे संकट दूर हो जावेंगे।"

हमारी सहनशक्ति अब तक जवाब दे चुकी थी। उठकर जरा जोर से बोलना पड़ा, "मि० वर्मा, आप हमारा समय बरबाद कर रहे हैं। ऐसी

दकियानूसी बातों पर न तो मैं विश्वास करता हूं और न ही मेरे पास समय है। आप खुद सर्विस छोड़कर क्यों नहीं ज्योतिषी का काम शुरू कर देते ?"

ज्योतिषी महाराज जजमान का हृदय पहचानते हैं। वह कभी गुस्से नहीं होते। प्रत्यक्ष रूप में ज्योतिषी पर चाहे कितना भी गुस्सा क्यों न करें, सरे आम जूते क्यों न खाने पड़ें उन्हें पर जूते खाकर यदि आर्थिक लाभ हो जाए तो वह बड़ी खुशी से आंखें मूंद कर निर्लिप्त भाव से जूतियां खा लेते हैं। खोपड़ी के बाल तो झड़ेंगे ही नहीं क्योंकि वहां पहले से ही मैदान साफ है।

यही वजह थी कि हमारे इतने नाराज होने पर भी वह नाराज नहीं हुए, परन्तु जब उन्होंने आंखें खोलीं तो पत्नी को गायब पाया। वह उनके भाषण के दौरान ही उठकर किचन में चली गई थी।

हमें अन्य काम भी करने थे। इसलिए उनसे ताकीद की कि यदि वह बुरा न मानें तो हम नहा सकते हैं ? उन्होंने कहा, "बरखुरदार, आज मंगलवार है, कड़वा तेल जिस्म पर मत लगाना, ग्रह बिगड़ जाते हैं। हां तो मैं जा रहा हूं। तुमने कर्ज अदायगी के बारे में कुछ सोचा है ?"

"क्यों नहीं सोचने ? रोजाना उसी के बारे में सोचता हूं।" हमने कहा।

"मैं आज घसीटूराम नीमकचढ़ के लड़के की शादी पर आया था। सोचा, तुमसे मिलता चलूं। कुछ है आज ?"

"देखिए वर्मा जी, आपको यहां पर बार-बार आने की तकलीफ न हो इसलिए हमने सोचा है कि उस राशि को किश्तों के रूप में आप तक पहुंचा दें।" इतना कहकर हम कमीज उतारने लग गए गोया बाथरूम में हों क्योंकि गर्मी ज्यादा थी और नहाने की इच्छा हो रही थी।

उनके चेहरे के भावों को हमने देखा नहीं पर उन्होंने उठते हुए कहा, "बहिन जी कहां हैं ? बुलाइए उन्हें, लेट भी हो रहा हूं।"

बहिन जी आना नहीं चाहती थी पर उनसे पिण्ड छुड़ाना था इसलिए मुश्किल से मना कर लाये। साहब ने एक भरपूर नजर उस पर डाली और फिर तुरन्त आंखें बन्द कर लीं और एक जोरदार भाषण उसे 'विदा' करने के उपलक्ष्य में दे दिया।

हम पति-पत्नी एक-दूसरे के मुंह की ओर देख रहे थे और आख के इशारे से एक दूसरे को खिसक जाने को कह रहे थे। भाषण क्योंकि कमरे से बाहर गली में हो रहा था हम क्रमशः किचन और बाथरूम में घुस गए। कमरे का दरवाजा अन्दर से बंद कर लिया। राम जाने उनका भाषण कब तक चलता रहता।

जिस पाठशाला में वह प्रधानाध्यापक थे, तथा जिसके उत्थान के लिए वह स्थानीय धनाढ्य लोगों की सहायता से एक ट्रस्ट स्थापित करना चाहते थे, वह जल्दी ही स्थापित हो गया। रुपया इकट्ठा किया गया। पाठशाला की ओर से सांस्कृतिक कार्यक्रम हुए, जिससे और राशि एकत्रित हो गई। जिन-जिन अन्य साधनों से धन इकट्ठा हो सकता था, जनाब ने इकट्ठा किया और तोंद बढ़ा कर आंखें मूद कर ध्यानस्थ हो गए। जिन-जिन कार्यक्रमो के लिए वह धनराशि एकत्रित की हुई थी उन पर जब कोई काम होता हुआ नजर नही आया तो लोगों का माथा ठनका। इधर-उधर कानाफूसी हुई। दीवार के भी कान होते है, बात जनाब तक भी पहुची। पर बात के उनके कान तक पहुंचने का कोई फर्क थोड़े ही पड़ने वाला था क्योंकि पहुंचे हुए पैगम्बर इस दुनियावी शोर-शराबे से निर्लिप्त रहते हैं, वह भी रहे।

परन्तु बात यही पर ही खत्म नही हुई। वह बढती गई। एक बार पन्द्रह अगस्त को स्थानीय लोगो ने कुछेक विद्रोही अध्यापको से मिलकर झण्डोत्तोलन के समय उन्हें घेर लिया। वह स्वय स्वतन्त्रता संग्रामी रह चुके थे और उस दिन इत्तफाक से स्वतन्त्रता दिवस ही था। उन्होंने वस्तु-स्थिति को समझते हुए तत्काल झण्डे की छत्रछाया मे समाधि की-सी मुद्रा अपना ली। स्वतन्त्रता दिवस पर देश के नेताओ तथा भारत माता की जय-जयकार के स्थान पर 'वर्मा मुर्दाबाद' के नारे गूंजने लगे। और वह बोधिसत्व की तरह समाधिस्थ रहे। काफी अच्छा मजमा इकट्ठा हो गया था।

लोगो को उनकी इस हरकत पर और ज्यादा बौखलाहट हुई। कुछ लड़कों ने उन्हें दोनो बाजुओं से पकड़कर उठाया और दफ्तर मे ले गए। वह अपनी कुर्सी पर बड़े आराम से चेहरे पर किसी भी प्रकार का भाव न

लाकर घर में रहे।

उनकी आंखें मुंदी हुई थी। एक सज्जन ने पूछा, "मास्साब, क्या कारण है कि आपकी समाधि ऐसे मौकों पर बहुत जल्दी लग जाती है, हवा का रुख देखकर? हमने आपको सुविधा के लिए नदी के पास कब्रगाह पर आपकी स्थायी समाधि बनाने की सोची है और उसके लिए हम चंदा उठाने जा रहे हैं।"

जनाब ने जब 'चंदा' शब्द सुना तो उनका ध्यान भंग हुआ। बोले बड़ी अच्छी बात है। दरअसल जनता की भलाई के लिए मेरी सेवाएं हर समय उपलब्ध हैं। कहे तो किसी अध्यापक को साथ भेज दूं।" और उन्होंने प्रसन्नचित्त हो फिर आंखें मूंद लीं।

सज्जन तमतमा उठे, "चंदा हम आपकी अंत्येष्टि के लिए इकट्ठा कर रहे हैं जनाब। बहुत हो चुका नाटक। अब बताइए कि ट्रस्ट खोलने के लिए आपने जो धन इकट्ठा किया था वह कहां है? नहीं तो हम पुलिस में रिपोर्ट करने जा रहे हैं।"

तब तक वह दुनियावी मूड में आ चुके थे। देवलोक में नहीं थे। कूट-नीति का हर पैंतरा उनके खून में संचार कर रहा था। अत: उन्होंने तुरन्त कॉलबेल बजाई। चपरासी आया। ऐसे मौकों पर उनका चपरासी सधा हुआ था। कॉलबेल की आवाज से ही चपरासी समझ जाता था कि साहब का मूड कैसा है।

दस-पन्द्रह मिनट के अन्दर सभी को बढ़िया नाश्ता करवाया गया। ईश्वर जाने साहब ने अपनी विलक्षण प्रतिभा से उन पर कैसा जादू कर दिया कि सभी उनकी जय-जयकार बोलते हुए बाहर निकल रहे थे। पाठक समझ गए होंगे कि 'मुर्दाबाद' 'जिन्दाबाद' में कैसे बदल गया।

उस दिन अचानक उन्हें देखा। इसी बीच चार-पांच बसन्त पतझड़ में तबदील हो चुके थे। सोचा, हमारे पास अभी भी उन्हीं रुपयों की अदायगी के लिए आए होंगे। पर वह सीधे 'लेफ्ट-राइट' की मुद्रा में बाजार के इस छोर से आए तो हमने उनसे बचने के लिए पान-गुमटी की ओट ले ली। पर वह उसी मुद्रा में पीछे मुड़े और फिर उस छोर तक पहुंचकर फिर मुड़ गए। हम चुपके से उन्हें देख रहे थे। उनकी मुद्रा किसी साधना

की सी थी और वह तन्मयता से भाषण समाप्त कर रहे थे। [illegible] हिटलर की फौजों ने भी इन पर अनुशासनबद्ध होकर [illegible] नहीं की होगी। जब उस चिलचिलाती धूप में उन्होंने इतनी देरकर [illegible] तो [illegible] माथा ठनका। जनाब किस उपलक्ष्य में यह सब कर रहे हैं? यही सोच रहा था कि वह बीच सड़क में खड़े होकर आँखें बन्द करके भाषण झाड़ने लग गए। आसपास आवारा कुत्तों ने उन्हें देखकर प्रतिक्रियास्वरूप अपने-अपने भाषण शुरू कर दिए। पर वह उसी तन्मयता से बोल रहे थे जैसे पाठशाला की सभा में बोलते थे।

आपको मालूम पड़ा न हो, वह भारतीय संसद में बोली जाने वाली भाषा में बोल रहे थे। एक कुत्ता उन्हें सूंघकर तीन टांगों पर खड़ा होकर लघुशंका करके चला गया था। जाते जाते कह रहा था—"साला, पागल हो गया लगता है।"

पाँच

मैडम के राज में पाठशाला की बढ़ती लोकप्रियता और कार्य-कुशलता से प्रभावित होकर शिक्षा विभाग ने मैडम से न जाने क्यों सौतेला व्यवहार किया कि उन्हें ज्यादा दिन तक प्रधानाध्यापक की गरिमामय कुर्सी पर बैठने नहीं दिया। एक उम्दा किस्म के प्राणी ने पाठशाला में पदार्पण किया।

प्रधानाध्यापकों की परम्परा में इन प्रधानाध्यापक की शख्सियत अपने ढंग की कुछ अलग प्रकार से राज्य के शिक्षा विभाग के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी जाएगी। बाकायदा लिखी भी जा चुकी है। उनकी प्रतिबद्धता खतरनाक सीमा तक वर्षों से समर्पित है तो सिर्फ एक ही बात पर। और वह है पाठशाला को रुपये इकट्ठे करने का एक माध्यम बनाना। और इस प्रतिबद्धता के लिए राज्य शिक्षा विभाग उन्हें समय-समय पर अनेक अलंकरणों से विभूषित कर चुका है। उनके पास करीब पाँच बार नौकरी से बरखास्तगी के आदेशों के अधिकारिक प्रमाण पत्र हैं परन्तु हर बार स्वयं को एक समर्पित शिक्षक का उदाहरण पेश करके पाक-साफ निकल जाने और फिर उसी पद पर पूरे मुआवजे के साथ सुशोभित होने के उदाहरण भी उन्होंने ही प्रस्तुत किए हैं। हमारी बिरादरी में वह कुछ हद तक कानून भी जानते हैं और अपने चेहरे की कालिख को पोंछने के लिए मानव इतिहास के समस्त मौजूदा कानून उनके आगे बौने हैं। सिर्फ वह ही लम्बे, सुस्वस्थ हैं, बाकी सभी ठिगने, बौने और बीमार।

जब मैडम कुर्सी पर थी तो धंसी रहती थी। पर जब से जनाब आए हैं, लगता है कुर्सी से उन्हें खास लगाव नहीं है। मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि उन्हें कुर्सी चले जाने का कोई भय नहीं है। वह तो प्रधानाध्यापक के कक्ष में बाकायदा मौजूद रहेगी ही। उस पर सारा समय धंसे रहने से अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं किए जा सकते थे।

उनकी इस कुर्सी विरक्ति को देखकर हमारे जैसे बुद्धिजीवी अध्यापकों

ने उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की। प्रशंसा करने वाले सिर्फ हम ही नही थे बल्कि कुछ संभ्रान्त किस्म के लोग और एकाध दफा चुनाव हारे चिप्सां किस्म के राजनीतिज्ञ भी थे जो उनकी अर्थात् नये प्रधानाध्यापक की प्रशंसा करने लग गए थे।

यह प्रशसा वह अपने चेहरे पर पिछली पाठशाला से अग्रिम रूप मे उपहार स्वरूप नही लाए थे बल्कि दो-तीन दिन पहले ही उन्होंने अर्जित कर ली थी।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज के सुबह से लेकर शाम तक के सभी प्रभाव हमारे ऊपर पडते रहते है। अपनी विरासत से प्राप्त प्रतिबद्धता के प्रति तो वह ईमानदार थे ही, है भी, पर जमाने के विकासवाद के सिद्धान्त के अनुसार जो नित नए प्रभाव हमारे ऊपर पड़ते हैं, प्रत्येक क्षेत्र मे जो नई ईजादें होती है, उनसे भी वह पूरी तरह प्रभावित रहते हैं। कहने का मतलब यह है कि वह समय के साथ हैं।

देश मे नित नए अवतारो का जन्म होता रहा है, हो रहा है। हमारी प्रथम सन्तान हमारी बिटिया भी अब चार साल की हो चुकी है। परसों वह दक्षिण दिशा में पडने वाले पड़ौसी के घर कीर्तन मे उपस्थित थी और एक भजन की दो पंक्तियां सीख आई थी और अपनी अम्मी को सुना रही थी। बेटी पर देश के अध्यात्मवाद का प्रभाव पडा देख कर हम कुछ आश्वस्त हुए हो, ऐसी बात नही है बल्कि कुछ हद तक चिन्तित भी हुए थे। पडोसी के कीर्तन मे रस भंग नही कर सकते थे क्योंकि देश धर्म-निरपेक्ष है। परन्तु जब कल बेटी पूर्व दिशा के पडोसी के घर से एक अन्य प्रतिद्वन्द्वी अवतार की आराधना का भजन गुनगुनाने लग गई तो हम सतर्क हुए। सुबह नाश्ता करके पाठशाला पहुंचे तो देखा प्रधानाध्यापक के क्वार्टर पर कीर्तन चल रहा है। ज्ञात हुआ की आज सरस्वती पूजा है और पाठ-शाला में विधिवत मनाई जावेगी।

प्रधानाध्यापक ने प्रार्थना सभा मे सरस्वती पूजा के महत्त्व का वर्णन करते हुए बच्चो को विभिन्न टोलियों मे बाट कर एक डिब्बा थमा दिया और नीचे बाजार के हर कोने पर मोर्चे बन्दी-नाके बन्दी करवा दी और सख्त हिदायत दी कि प्रत्येक आने जाने वाले से उस डिब्बे में सरस्वती

पूजा का चंदा डलवाने को बाध्य करें। कुछ "फारवर्ड" किस्म की छात्राओं के जिम्मे इस नाकेबदी का कार्यभार था।

प्रधानाध्यापक महोदय ने बच्चों को बताया कि सरस्वती पूजा हमारी सांस्कृतिक मान्यताओं का एक अभिन्न अंग है अतः विद्या की इस देवी की हम कैसे उपेक्षा कर सकते हैं ? अपनी सांस्कृतिक परम्परा को हम कैसे भूल सकते हैं ?

बच्चे डिब्बों में चंदे की रेजगारी और नोट भरवाते रहे और पाठशाला में पूजा पाठ की तैयारियां होती रहीं। काफी धूमधाम से पूजा हुई। प्रसाद बांटा गया और भजन-कीर्तन हुए। छात्र-छात्राओं को सामूहिक रूप से एक दूसरे के करीब आने का अवसर प्राप्त हुआ। शिक्षक-शिक्षिकाओं को मन ही मन में सरस्वती देवी के आगे और कुछ न होकर अपनी अपनी मुराद पूरी तो नहीं पर अरदास करने का मौका तो मिला। तीन दिन तक किताबें बंद रहीं और विद्या देवी की पूजा चलती रही।

काफी दिनों के बाद स्थानीय कस्बे के लोगों के बीच यह बातें सुनी गईं कि पाठशाला में बाकायदा सरस्वती वास कर रही है। बच्चों में आध्यात्मिकता पैदा करने की आवश्यकता पर हमारे धर्म परायण नेतागण समय-समय पर भाषणों की वर्षा करते रहते हैं। अतः नए प्रधानाध्यापक वास्तव में सत्ताधारी सरकार के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में पाठशाला में आ जाने पर कस्बे में व्यापक प्रतिक्रिया हुई और बच्चों के भविष्य के प्रति आश्वस्त होकर इस कस्बे की पच्चानवे प्रतिशत बनिया जनसंख्या अपने-अपने कारोबार में जी-जान से जुट गई।

स्थानीय बनिया समुदाय, इस कस्बे की मानसिकता का प्रतिनिधित्व करता है। इन्होंने अपनी संस्कृति को अपनी घरेलू पत्नियों के बूते अभी तक जीवित रखा है। इनके दिलों में संस्कृति, धर्म, ईश्वर, सतसंग, पूजा-पाठ जो कुछ भी हो, पर अटूट श्रद्धा है। और यही कारण था कि हमारे "धर्मभीरू" नए प्रधानाध्यापक ने संस्कृति और आध्यात्म का जो बीज पाठशाला में बोया था, वह अब लहलहाने लग गया।

सरस्वती पूजा के तुरन्त एक सप्ताह बाद उन्होंने अचानक अध्यापकों के सामने गंभीर मुद्रा में रहस्योद्घाटन किया कि उन्हें रात में अमुक

भगवान ने दर्शन दिए हैं। उनके चेहरे पर के सदाबहार मौसम से ऐसा कोई आभास नहीं हुआ क्योंकि उनके झाईया पड़े चेहरे पर हमें निहायत कमीनेपन की बू आ रही थी। हमारे साथ के अन्य शिक्षक भी हमारी तरह उनके इस नाटक से प्रभावित नही हुए फिर भी धर्मपरायण शिक्षिकाएं अवश्य ही प्रभावित हुई। लगता था प्रधानाध्यापक के चेहरे के दिव्य आलोक के कुछ कण उन शिक्षिकाओं पर भी गिर गए। वे काफी समर्पित तथा श्रद्धालु भाव से प्रधानाध्यापक के आध्यात्मवाद पर बातें करने लग गई थी। वह गंभीर भाव से "ईश्वर" के साथ हुई उस अलौकिक भेंट के बारे मे शिक्षिकाओं को बता रहे थे। वह उस समय इस प्रकार प्रवचन दे रहे थे जैसे वह स्वय आधुनिक भगवान हों और शिक्षिकाएं उनकी अनन्य गोपिकाएं। यह तय किया गया कि हर शाम को टीचर्स क्वार्टर्स पर भजन-कीर्तन किया जाएगा।

पाठशाला में संस्कृति तथा आध्यात्मवाद का पाठ पढ़ा कर प्रधानाध्यापक पाठशाला का हृदय परिवर्तन करने जैसा माहौल उत्पन्न करने के बाद निश्चित होकर अपने कारोबार मे जुट गए।

यह सौभाग्य की बात कहें या दुर्भाग्य की कि हमें अपने अध्यापन काल में जितने भी प्रधानाध्यापको के मातहत अपनी सेवाएं अर्जित करनी पड़ीं वे सभी "पहुंचे" हुए ही थे। यह अलग बात है कि कुछ अव्यवहारिक आदर्शों के कारण आज रिटायर होकर निर्धनता और पछतावे की जिन्दगी बसर कर रहे है और कुछ देखते ही देखते इतने ऊंचे ओहदे पर पहुंच गए कि वहा तक पहुंचने के लिए उनके अजीजो को सीढ़िया लगानी पड़ती हैं। उनका कारोबार पाठशाला चलाना था ही, पर इसके साथ ही साथ उन्होने कई लघु, कुटीर उद्योगों से स्वयं को जोड कर देश की सांस्कृतिक आध्यात्मिक, तकनीकी, शैक्षिक—कहने का मतलब यह है कि सर्वांगीण प्रगति एवं उन्नत्ति के लिए सिर पर कफन बांधा था। एक स्थानीय नए मास्टर को जो शिक्षण के क्षेत्र मे नौसिखिया था। प्रधानाध्यापक महोदय उसे उप-प्रधानाध्यापक का उत्तरदायित्व सौंप कर आए दिन पाठशाला की समस्याओं को लेकर विभाग के चक्कर काटने लगे। विद्यालय के प्रति उनका समर्पण भाव इसी बात का द्योतक था कि वह समस्याओ को लेकर

उचित लोगों तक पहुंचाने के लिए टूर पर ही रहते थे।

जो मैडम उनके आने से पहले पाठशाला की बागडोर सम्हाले थीं, उन्हें नए प्रधानाध्यापक ने विभागहीन बना दिया। बिना विभाग वाले नेता की सी स्थिति हो गई थी उनकी। असन्तुष्ट विधायकों की तरह उन्होंने योजनाबद्ध रूप से नए प्रधानाध्यापक के विरुद्ध अपना समर्थन बटोरने के दाव-पेंच फेंकने शुरु कर दिए। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि नए प्रधानाध्यापक भी अखाड़े के पहलवान नेता रह चुके थे। उन्होंने अपनी जिन्दगी में ऐसे कई विरोध सहे थे और सभी विरोधों संघर्षों, छोटे-मोटे तख्ता पलट अभियानों को असफल बना दिया था। उनके ऊपर शाब्दिक हमलों अर्थात बदनामी जैसी चीज की छीटाकशी भी हुई पर "सीजनप्रूफ" होने के कारण उनकी क्षमता वाकई रिकार्ड तोड़ है। ऐसे शाब्दिक हमलों का उनके स्वास्थ्य पर रत्तीभर फर्क नहीं पड़ता। यहां तक कि नजला जुकाम भी नहीं होता। जैसे ही ऐसे हमलों की संख्या बढ़ती जाती थी वह और ज्यादा काम में जी-जान से जुट जाते थे।

पिछली पाठशाला के प्रधानाध्यापक वर्मा की तरह इनका भी लक्ष्मी प्रेम विख्यात है, यहां तक कि दोनों की शैली भी एक ही है।

पाठशाला की समस्याओं को लेकर वह महीने में अठ्ठाइस दिन पाठशाला से बाहर रहते थे। पाठशाला अब भी मैडम की पदचिन्हों पर चल रही थी पर गौरवशाली कुर्सी पर एक नए नौजवान बैठ गए थे जिनके चेहरे पर गए जमाने की नवाबगिरी टपकती थी। इस भूतपूर्व नवाब की नियुक्ति हुए ज्यादा दिन नहीं हुए थे। वह भारतीय विश्वविद्यालय का तीसरे दर्जे में उत्तीर्ण स्नातक था पर सबसे अहं मसला यह था कि वह स्थानीय गए जमाने के सभ्रान्त खानदान से ताल्लुक रखता था। स्थानीय राजनीति में ऐसे लोगों का दबदबा रहता ही है। इसलिए नए प्रधानाध्यापक ने इस महत्वपूर्ण व्यक्ति को असिस्टेंट बना कर महत्वपूर्ण प्रशासन को मजबूत करने का व्यवहारिक कदम उठाया। यह उनकी सूझबूझ का भी एक उदाहरण था क्योंकि यह परम्परा जो राज्य के शिक्षा विभाग में चली आ रही थी, वह उसे तोड़ना चाहते थे। सर्विस के आधार पर किसी अध्यापक को असिस्टेंट बनाना चाहे वह चौथी जमात पढ़ा हो, यहां की

गौरवशाली परम्परा थी और अभी तक बरकरार है। वास्तव में उन्होंने इस परम्परा को इस लिए तोड़ा कि वह मैडम के प्रभाव को कम करना चाहते थे। हमारी पाठशाला की भूतपूर्व प्रधानाध्यापिका का प्रभाव कम करने के लिए पाठशाला में नए अध्यादेश, विधेयक पारित किए गए। पाठशाला के संविधान में संशोधन हुआ और उसमें नई धाराएं जोड़ दी गई। उन्होंने गोरों द्वारा दिया हुआ भारतीय राजनीति का व्यावहारिक हथकण्डा "फूट डालो और राज करो" इस्तेमाल करके अपनी प्रगतिशीलता का उदाहरण प्रस्तुत किया। उनके अनुसार परम्पराओं से चिपके रहना स्वयं को पिछड़ेपन की ओर धकेलना होता है।

अपने बीस-पच्चीस दिन के दौरे से वापस आकर महोदय अपरान्ह को जब पाठशाला पहुंचते तो कुर्सी पर बैठकर असिस्टेंट को बुला कर कहते, "भाई मैं बहुत थका हूं। आज आप स्कूल देखिए, मैं कुछ आराम करना चाहता हूं।" और क्वार्टर की ओर चले जाते। स्कूल चलता आ रहा था, चलता रहता।

इस नए परिवर्तन पर, पाठशाला में आए नए चेहरों के कारण पाठशाला के परम्परागत ढांचे में भी परिवर्तन हुआ। परम्परा तोड़ने में किसी अकेले व्यक्ति का हाथ नहीं होता क्योंकि परम्परा काफी सख्त चीज होती है। वह एक हाथ के प्रहार से नहीं टूटती, उसे तोड़ने के लिए सामूहिक चोटों की आवश्यकता होती है। प्रधानाध्यापक के आने पर मैडम द्वारा स्थापित परम्परा टूटी, दूसरा असिस्टेंट नियुक्त हुआ। रजिस्टर नए प्रकार से बने, रूटीन बनाने में दो-तीन महीने लग गए और इसी बीच पढ़ाने का भी परम्परागत ढांचा टूटा, नए शिक्षक-शिक्षिकाओं की नियुक्त हुई जिनमें नवाबी चेहरा लटकाए असिस्टेंट तो थे ही साथ ही एक अदद स्नातक कन्या भी आ गई। "कन्या" इसलिए कहा गया क्योंकि पाठशाला की अन्य शिक्षिकाएं शादी के मैदाने जंग में अपने करतब दिखा चुकी थीं। सभी साल में दो-तीन महीने की छुट्टियां लाजमी तौर पर लेती थीं। उनके चेहरों पर की झाइयों पर मक्खियां भिनभिनाती रहती थीं। शिक्षकों में हमारी तरह के डेढ़ पसली के पहलवान भी थे जो शादी के मैदाने जंग में पीठ दिखाए सिपाहियों की तरह हमेशा चेहरे लटकाए रहते थे।

नए शिक्षकों की भर्ती मे नवाब साहब में एक प्रतिकूल बात यह थी जो शायद देश के अन्य गए बीते नवाबो पर खरी नहीं उतरे। वह काफी तन्दरुस्त थे और जिस "कन्या" का जिक्र हमने ऊपर किया था वह किसी नवाबी खानदान से ताल्लुक तो रखती नही थी पर सेहत के मामले मे उसने भी सभी रिकार्ड तोड़ दिए थे। अर्थात बिहारी की नायिका की तरह थी। पाठशाला के नवाब साहब से उसकी पहले ही दिन "लव एट फर्स्ट साइट" वाली बात हो गई थी। हम आज तक इस बात का पता लगाने मे असमर्थ रहे हैं कि उन दोनो मे ऐसी कौन-सी बात है जिसके तहत उन्हे चांद और चकोर वाली कहावत को चरितार्थ करने की नौबत आ गई थी। नवाब साहब के डील डौल की तुलना में इस कन्या का कोई अनुपात नही है। मुश्किल से तीस किलो वजन होगा। पहले ही दिन हम उसके सावले चेहरे पर टिकी चितकबरी आखो पर आकर्षित हुए थे। हमारे आकर्षित होने का अर्थ उन पर मोहित होना नही था बल्कि इसलिए कि वह आखें अस्वाभाविक तौर पर निरन्तर झपकती रहती थी। पहले तो ऐसा लगा था कि आखो मे कोई खराबी न हो। पर जब हमने एक खुफिया अधिकारी की तरह उसकी आखो का एक्स-रे ,उसकी अनुमति तथा जान-कारी के बगैर ही ले लिया तो हमें ज्ञात हुआ कि आंखें झपकाने की उसकी बीमारी पैदाइशी है।

इस नए जोड़े ने पाठशाला की मानसिकता मे एक क्रांतिकारी परि-वर्तन लाकर खड़ा कर दिया। भूतपूर्व प्रधानाध्यापिका के शासन काल के जुम्ले चूंकि अब इस जोड़े के सामने सुनाए नही जाते थे इसलिए पश्चिमी और पूर्वीय शैलियो के मिश्रण से बनी एक नई रोमांस शैली पाठशाला की मार्किट मे शुरू हुई। जब टीचर्स रूम मे वे एक दूसरे की आखो मे आखें डाले बैठे रहते तो हम शादीशुदाओं के खून सूखते रहते। हमे शक होता कि इतनी देर तक वे बिना किसी दुर्घटना के कैसे आंखो मे आखें डाल कर बैठे रहते हैं? हमारे अपने जीवन के इतिहास मे ऐसा वक्त कभी नही आया कि हम इतनी देर तक दुर्घटनाहीन बैठे रहे।

सच-सच बताएं तो उनके इस प्रकार बैठने से हमें कोई ईर्ष्या अथवा क्रोध आता हो ऐसी बात नहीं थी। पर हमें एक लिजलिजी नपुंसकता का

अहसास होता था। हम शिक्षक-शिक्षिकाओं के साथ-साथ अब पाठशाला के वय: सन्धि की कगार पर खड़े छात्र-छात्राएं भी हुड़दंगों को भूल कर कक्षाओं में भी उन्ही के पद चिह्नों पर चल कर अपने चहेतो को एकटक देखने का अभ्यास करने लग गए थे।

ताज्जुब होता था कि एक क्षण में पांच-दस बार आंखें झपकने वाली लड़की इतनी देर तक कैसे एकटक देखती रहती है और नवाब साहब अपनी डेढ़ इंच लम्बी मूछों के बाल नोचते रहते थे।

मैंने ऊपर कहा था कि इनके आध्यात्मिक प्रेम का हमारी पाठशाला पर पूर्ण रूप से प्रभाव पड गया था। बंधे-बधाए ढर्रे पर बतियाते रहने के बजाय एक नया प्रगतिशील मार्ग प्रशस्त हो गया था।

बड़ी कक्षाओ में जब शिक्षक पढ़ाने जाते तो यदि शिक्षिका हुई तो कक्षा के लड़के उसके चेहरे की ओर एकटक देखते रहते और यदि शिक्षक हुआ तो छात्राएं उसके चेहरे की ओर देखती रहती। चूंकि इस पाठशाला मे कोई शिक्षक सठियाया हुआ नहीं है अत: गुरुभक्ति के लक्षण जो कभी-कभार हमारी हिन्दी फिल्मों में दिखाए जाते हैं, उनकी प्रेक्टिस यहा होने लग गई थी। कक्षा समाप्त होने पर छात्र-छात्राएं एक दूसरे की ओर देखने लग जाते गुरुजनो के पदचिह्नो पर चलने का यह एक उज्जवल एवं प्रामाणिक उदाहरण था।

हमारी पाठशाला मे आए इस परिवर्तन पर नए प्रधानाध्यापक बहुत खुश हैं। इनके अनुसार इस पाठशाला के इतिहास मे नवाब साहब जैसा शिक्षक और कोई नही था। इससे पहले क्योंकि वह स्वयं नही थे और नवाब साहब नही थे, इसी कारण पाठशाला मे बच्चों से लेकर शिक्षकों तक अनुशासनहीनता, संस्कृति विहीनता और धार्मिकता के संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। संस्कृति प्रेम और नव भगवानवाद प्रेम के बीज तो प्रधानाध्यापक ने पाठशाला मे आते ही बो दिए थे जिसके फल-स्वरूप पाठशाला मे आए दिन अध्यापिकाएं कक्षा मे अपना विषय न पढ़ा कर बच्चों को भजन सिखाने लग गई थी। बच्चे भी खुश थे। तीज-त्यौहार भी पाठशाला में मनाए जाने से संस्कृति और परम्परा प्रेम भी उपस्थित हो गए थे और नवाब साहब के कारण आध्यात्मिक प्रेम से छात्र-छात्राओ

के चेहरों पर नए प्रेम की कोपलें फूट चुकी थी, जिससे उनके चेहरे हरे भरे हो गए थे। पाठशाला मे एक सांस्कृतिक क्रांति आ चुकी थी और प्रधानाध्यापक की मुख-मुद्रा माओ-त्से-तुंग से मिलती-जुलती थी।

मैडम ने इन दिनो एक गुप्त विपक्ष तैयार करने की योजनाए बनानी शुरू कर दी थी। नए प्रधानाध्यापक की प्रतिद्वन्द्वी तो वह थी ही, क्योंकि उसके हाथो से सत्ता हथिया कर उन्होंने उनकी सभी स्थापित परम्पराओं को तोड दिया था। अतः वह उनके विरोध मे अपने क्वार्टर में गुप्त गोष्ठियो का आयोजन करती थी। वह एक तगडा विपक्ष खडा करना चाहती थी ताकि उन्हे खोई हुई सत्ता वापस मिल सके। यह लडाई सिद्धान्तो की नही थी बल्कि सत्ता प्राप्ति के लिए की गई लडाई थी। आखिर सिद्धातों की लड़ाई लडता ही कौन है आजकल ?

आए दिन प्रधानाध्यापक से उनकी झड़प हो जाती थी। डरती तो वह किसी से थी नहीं। इसलिए एक तरफ जब प्रधानाध्यापक ने ठान लिया था कि पाठशाला एक स्वस्थ परिवर्तन के दौर से गुजर रही थी, वहा उन्हें भनक मिल गई थी कि कुछ उनकी नीतियों के विरोधी अपना सिर उठा रहे हैं। उन्हे कुचलने के लिए उन्होंने नवाब साहब की सेवा प्राप्त की। नवाब साहब भी कम नहीं थे। वह भी नही चाहते थे कि जो ओहदा उन्हें मिला है उसे किसी कीमत पर मैडम को सौंपें। अतः उन्होंने इसके विरोध मे तटस्थ रहकर अर्थात् निर्दलीय रह कर अपनी भूमिका स्पष्ट कर दी। मैडम यदि प्रधानाध्यापक की लम्बी अनुपस्थिति के बारे में अपनी नाराजगी प्रकट करती तो नवाब साहब मूंछों के बाल नोचते हुए मैडम की ही तरफ एकटक देखने लग जाते।

मैडम के साथ असंतुष्ट विधायकों की तरह कुछेक मुदर्रस भी थे जो मैडम के सत्ताकाल मे चादी काटते थे। चांदी तो वैसे सभी की कटती थी पर कुछ उच्चस्तरीय भाप थे जो आएदिन पाठशाला से गायब रहते थे। महीने मे उन्तीस दिन उन्हें छुट्टी चाहिए थी। वैसे उनकी उपस्थिति मे पाटशाला की शिक्षा-पद्धति अथवा प्रगति की सेहत पर कोई स्थायी अथवा अस्थाई प्रभाव नहीं पड़ता था। मैकाले साहब बहुत ही पहुंचा हुआ शिक्षा-विद् था जिसने एक ऐसी अपरिवर्तनीय शिक्षा-पद्धति हमे दी, जिसे आज

तक बदलने मे न तो हमारी सरकार कामयाब हुई और न ही उसे बदलने की उसने कोशिश की है, मगर एक वफादारी की हद तक उसे बरकरार रखने के लिए हमारा देश दृढ़-सकल्पित है शिक्षक क्यो न हो ?

इन चालू किसिम के शिक्षक बड़ी शानो-शौकत से अपने-अपने गांवों में अपने निजी काम करते थे और फिर आकर एक ही बार अनुपस्थित दिनों की जगह पर दस्तखत करके विभाग की नजरोंमे अपनी उपस्थिति का प्रमाण प्रस्तुत करके अगले महीने फिर उसी तरह हाइबरनेशन की अवस्था में चले जाते थे। नए प्रधानाध्यापक इस अधिकार को सिर्फ अपने तक ही सीमित रखना चाहते थे। वह नहीं चाहते थे कि उनके बराबर अधिकारों का उपयोग अन्य शिक्षक कर सकें। जहा मैंडम अपने खुफिया विभाग से नए प्रधानाध्यापक के विरुद्ध साजिश की तैयारी कर रही थी, वहां हमारी तरह डबल ऐजन्ट की भूमिका निभाने वालों ने प्रधानाध्यापक के कान भर दिए। "फूट डालो और राज करो" की परम्परा को कायम रखने के लिए अपनी-अपनी ऊर्जा का इस्तेमाल किया जा रहा था। हमे इस बात का पूरा यकीन था कि इस फूट के कारण हम खुद राज तो कर नही सकते थे पर कम से कम अव्यवस्था की स्थिति तो उत्पन्न कर सकते थे और पर-पीड़न सुख का आनन्द तो लूट सकते थे। साथ ही आखें मूंद कर तीसरी आख से नजारे देखने का लुत्फ तो ले सकते थे।

हमारा अभियान भी कारगर ढंग से सफल हुआ और दोनो पक्षों ने अपने-अपने मोर्चे संभाल लिए। एक दूसरे के विरुद्ध प्रमाण इकट्ठे किए जाने लगे। प्रधानाध्यापक महोदय ने उन शिक्षकों द्वारा छुट्टियो के लिए दी गई दरखास्तो का पुलिन्दा वकौल प्रमाण के लिए रख लिया। शिक्षा विभाग ने हर एक साल के लिए पंद्रह छुट्टियों की व्यवस्था की थी। पर एक शिक्षक महोदय की पिछले छः महीनों की साठ-पैंसठ दरखास्तें प्रधानाध्यापक के हाथ लग गईं। ये दरखास्तें मंजूर की हुई नही थी। पाठशाला मे इसलिए छोड दी जाती थी कि कही निरीक्षक अचानक आ जाए तो तुरन्त निकालकर दिखा दी जाएँ कि अमुक शिक्षक छुट्टी पर है। दरख्वास्तें चूंकि स्वीकृति की मोहरो से वचित थी इसलिए अनुशासन के मामले पर मैडम के दल को एक ही नही दो-दो मामले लेने के देने वाली

स्थिति में डाल सकते थे। एक तो यह है कि अभियुक्त पाठशाला से गैरहाजिर था अमुक तारीख को क्योंकि दरखास्त की तारीख इसका प्रमाण थी और उस दिन अभियुक्त ने हाजिरी रजिस्टर पर बकलम खुद हस्ताक्षर किए थे। हाजिरी रजिस्टर पर उनके अनुसार पाठशाला में उपस्थित था पर दरख्वास्त के अनुसार अनुपस्थित। अजीब रहस्यवाद है न ? प्रधानाध्यापक ने इस मामले को लेकर बात उड़ा दी और उड़ती हुई बात विपक्ष के कानों से टकराई। टकराते ही विपक्ष की एक आपात बैठक मैडम के वासस्थान पर हुई। मौजूदा स्थिति से निपटने के लिए कोई कार-गर तरीका ढूंढने के सुझाव पेश किए गए। प्रस्ताव पारित होते-होते रह गया कि उन दरख्वास्तों का पुलिन्दा कार्यालय से उड़ाकर नष्ट कर दिया जाए। चूंकि हम प्रत्यक्ष रूप से विपक्ष में थे पर वास्तव में हमारी भूमिका संदिग्ध थी। डब्ल ऐजन्ट वाली। हमने इसका घोर विरोध इसलिए किया क्योंकि यह काम हमारे जैसे दु:साहसी को करना था। पर इतने दु:साहस के वास्तव में हम धनी नहीं थे। जनमत संग्रह की स्थिति उत्पन्न हुई। अन्तत: हमारे इस सुझाव पर कि पकड़े जाने पर हमारा पक्ष बदनाम हो जाएगा तथा इसमें दल में मतभेद उत्पन्न हो सकता है। जो स्वस्थ और सुदृढ़ विपक्ष के लिए अस्वास्थ्य कर है तथा ऐसी स्थिति में सत्ताधारी पक्ष को उद्दण्ड और तानाशाह बनने के अवसर मिल सकते हैं, अत: जीत हमारी ही हुई। बहस अगली बैठक तक के लिए स्थगित करते हुए विपक्ष की अध्यक्षा मैडम ने कहा कि प्रधानाध्यापक के पास पाठशाला का जो वित्त मन्त्रालय है, उस पर कड़ी नजर रखी जाए। यदि धन के दुरुपयोग का मामला पकड़ा गया तो सत्तारूढ़ पक्ष के त्यागपत्र देने तक की स्थिति उत्पन्न कराई जा सकती है अर्थात् प्रधानाध्यापक की तब्दीली कराई जा सकती है। यह मामला चूंकि इतना आसान नहीं था जिसमें विपक्ष को सफलता मिल सकती। फिर भी अगली बैठक में इस पर सर्व-सम्मति से प्रस्ताव पारित किया गया कि पाठशाला की आय पर पूर्ण रूप से खुफिया नजर रखी जाए। तथ्यांक इकट्ठे करके किसी स्थानीय समाचार पत्र में प्रकाशनार्थ भेज दिए जाएं।

विपक्षी दल को ताकतवर होता देखकर प्रधानाध्यापक ने अपनी परि-

योजनाओं को बद नही किया, जो उन्होंने पाठशाला में आते ही फाइलों के माध्यम से बनानी शुरू कर दी थी।

आप जानते ही हैं, किसी परियोजना को शुरू करने के लिए धन की आवश्यकता होती है। जो चतुर व्यक्ति होता है। वह धन के स्रोत को कहीं न कही से ढूंढ लेता है। वह साधन सम्पन्न होता है। लोग मिट्टी से भी सोना बना लेते हैं। प्रधानाध्यापक के लिए पाठशाला एक ऐसी मिट्टी थी, जिससे वह बड़ी चतुराई से सोना बनाने में सफल हो रहे थे। वह यह सब काम इस मुस्तैदी से करते थे कि लाख कोशिश करने पर भी किसी को पता नहीं चलता था। एक भ्रमजाल की सी स्थिति थी। आप ही बताएं, ऐसी स्थिति होगी जब एक व्यक्ति चोर का चेहरा लिए सरेआम घूमता हो और चोरी करता हो पर आप प्रमाणित कर नही सकते कि वाकई वह चोर है। और उसे भी ऐसी कोई हीन भावना नहीं है कि वह वाकई कोई गलत काम कर रहा है। इस प्रवृत्ति को प्रश्रय देने के लिए हमारी कानूनी व्यवस्था ने जिस समर्पित भावना से सहयोग दिया है और दे रही है, उसके लिए उसकी प्रशंसा किए बिना नही रहा जा सकता।

प्रधानाध्यापक वैसे ही आध्यात्मिक रंग से रंगे हुए थे इसीलिए उन्हें रंगे हाथों पकड़ना किसी के बूते की बात नहीं थी। जब विरोधी पक्ष ताकत दर-ताकतवर होता गया तो एक परिवर्तन उनमें आया। उन्होने महीने में अट्ठाइस दिन के बजाय अठारह दिन बाहर रहना शुरू कर दिया और इस अवधि में पाठशाला में रहकर वह विद्यार्थियों पर, शिक्षा विभाग पर और सारे देश पर एक बहुत बड़े अहसान करने का भाव अपने चेहरे पर ओढ़े हुए दिखाई देते थे। और दूसरी बात उन्होंने यह की कि पाठशाला के एक छोटे से कमरे मे अपनी कुर्सी लगाकर एक अलग-थलग कार्यालय बना लिया। शिक्षकों और विद्यार्थियों से उनका सम्पर्क रजिस्टर के माध्यम से होता था जो कभी उनके पास, कभी टीचर्स रूम में आता जाता रहता। उन्होंने इस रजिस्टर संचार व्यवस्था की सृजना इसलिए की थी कि उनके पास किसी को आने की आवश्यकता न पड़े और यदि कुछ जरूरी काम हो तो रजिस्टर पर लिख कर उनके पास पहुंचा दिए जाए। वह इस मांग पर विचार करके अपनी टिप्पणी भेजते। यह सिलसिला सारे दिन चलता।

रहता और अध्यापक उस रजिस्टर पर ही आँखें गड़ाए बैठे रहते। अब आप पूछेंगे कि भला इस अदने से रजिस्टर की कौन ऐसी महत्वपूर्ण भूमिका थी जिस पर पाठशाला की समूची कार्य प्रणाली निर्भर करती हो। तो जनाब होता ऐसे था कि मान लीजिए किसी अध्यापक को इच्छा हुई कि वह कक्षा कमरे के अन्दर नहीं लेगा। वह मैदान के कोने वाले आम के पेड़ के नीचे बैठ कर पढ़ाना चाहता है। अब चूंकि उक्त अध्यापक यह अपनी मनमानी से कर नहीं सकता, प्रधानाध्यापक की अनुमति जरूरी है इसमें, इसलिए वह रजिस्टर पर अपनी मांग लिखकर प्रधानाध्यापक तक पहुंचा देता। खुद टीचर्स रूम में अन्य अध्यापकों से गप्पें लड़ाता। प्रधानाध्यापक निन्यानवे के फेर में जर्ब-तकसीम में उलझे होते। रजिस्टर टेबल पर पड़ा रहता परन्तु जब तक उनके हाथ का रोकड़ ठीक नहीं होता, मांग पर विचार नहीं करते।

जर्ब-तकसीम से निपट कर सन्तुष्टता और गंभीरता चेहरे पर लाकर वह और गंभीरता से रजिस्टर की मांग पर विचार करने में डूब जाते। फिर कहीं जाकर कक्षा कमरे के अन्दर लेनी चाहिए अथवा बाहर, इस पर एक आदेशनुमा टिप्पणी लिखने में उन्हें पैंतीस मिनट लग जाते। अब चूंकि एक पीरियड चालीस मिनट का होता है, जिसमें पन्द्रह मिनट रजिस्टर प्रधानाध्यापक के पास पहुंचने में खर्च हो चुके हैं। बाकी रहे पच्चीस मिनट तो पच्चीस और पैंतीस साठ मिनट के बराबर हुए। चपरासी जब स्वीकृति का रजिस्टर अध्यापक तक पहुंचाता, तब तक बीस मिनट हो चुके होते हैं घंटी लगे हुए। अध्यापक टीचर्स रूम में ऊंघ रहा होता है और टिप्पणी पढ़ कर एक भद्दी सी गाली मन ही मन में बोल वह सुसताता-सा अगली कक्षा में चला जाता है।

इस प्रकार पाठशाला का मुख्य उद्देश्य निरपेक्ष है, सापेक्ष नहीं है। पाठशाला में बहुमुखी उन्नति के लिए प्रधानाध्यापक का नजरिया लोक तान्त्रिक मूल्यों की दुहाई देने वाले नेताओं से, साम्प्रदायिकता और पृथकता-वाद को प्रश्रय देने वाले के मुंह से धर्म-निरपेक्षता और राष्ट्रीयता की बात करने जैसा है। उनके अनुसार पाठशाला की पढ़ाई की पूरी जिम्मेदारी शिक्षकों पर होती है प्रधानाध्यापक पर नहीं। शिक्षक जिस-जिस प्रणाली में

पढ़ाएं, उन्हे पूर्ण स्वतन्त्रता है। लोकतान्त्रिक पद्धति से वह पाठशाला चलाना चाहते हैं। विशुद्ध प्रशासनिक पद्धति से। कक्षा का पाठ्यक्रम समाप्त होना चाहिए, चाहे कोई शिक्षक एक दिन में समाप्त कर दे, चाहे कोई शिक्षक एक पूरा साल लगा दे। उनके पास कोर्स पूरा होने की लिखित रिपोर्ट पहुंचनी चाहिए। कक्षाओं मे आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों को वर्ण-माला भी पूरी तरह से आती है या नही, इस बात की न तो उन्हें चिन्ता है और न ही इसकी जांच करने की फुर्सत ही उन्हे है।

मैडम ने इस लोकतान्त्रिक स्वतन्त्रता का भरपूर उपयोग किया है। वह अक्सर देर से कक्षा मे पहुंचती हैं। छोटी कक्षाओं के बच्चे समवेत स्वर में चिल्लाने लगते हैं, "मैडम, कहानी सुनाइए न !" वह उन्हें आश्वस्त करके बिठाती है और ताजे पढ़े उपन्यास या किसी फिल्म की कहानी सुनाने लग जाती है। बच्चे इतनी तन्मयता से सुनते हैं कि लगता है वे मूर्तियां हों, निष्प्राण। इस बात मे दो मत नहीं हो सकते कि मैडम के पास बच्चों को नियन्त्रित करने की अद्भुत शक्ति है। क्षमता है। जब अन्य कक्षाओं का शोर-शराबा वातावरण से छनकर प्रधानाध्यापक के कक्ष में पहुंचता तो कभी-कभार वह टांगें सीधी करने के लिए, बाहरी ताजी हवा लेने के लिए निकलते। अन्य कक्षाओं में या तो बच्चे पहाड़े दुहरा रहे होते या हुड़दंग मचा रहे होते पर मैडम के कमरे मे श्मशान सी निस्तब्धता देखकर वह चौंक पड़ते। मैडम कनखियों से उन्हें देखकर अपनी कहानी जारी रखती। जब प्रधानाध्यापक ठीक दरवाजे से गुजरते तो वह उठकर कहती "तो बच्चो, मैंने तुम्हे बता दिया कि पृथ्वी गोल है। क्यों गोल है, यह भी बता दिया और यदि गोल न होती तो..." तब तक प्रधानाध्यापक अगली कक्षा तक पहुंच चुके होते हैं। यह एक शुद्ध सनातनी शाकाहारी शिक्षक की कक्षा है। पूरी कक्षा को चुप कराने मे वह असमर्थ रहे हैं और अब बच्चों को मुंह बंद करके वह उसके ऊपर उंगली रखकर बैठने को कहते हैं। बच्चे विभिन्न आवाजें निकाल रहे होते हैं। इस शिक्षक के चेहरे पर से वैसे ही सदाबहार हवाईयां उडी रहती हैं, प्रधानाध्यापक को देखकर वह और घबरा जाता है। पर प्रधानाध्यापक इन छोटी-मोटी बातों को नजर-अन्दाज कर दिया करते हैं।

पाठशाला में वैसे ही विपक्षी दल सिर उठा रहा था अतः ऐसी स्थिति में वह किसी शिक्षक पर कार्यवाही करके संकट की स्थिति उत्पन्न नही करना चाहते। असन्तुष्टों की संख्या बढ़ाना नहीं चाहते। ऐसा तो लोकतंत्र मे होता ही है, क्योंकि लोकतन्त्र हमारी रग-रग में समाया हुआ है। क्षमा करना भी हमारी परम्परा का एक गौरवशाली पक्ष है।

मैडम ने जहा एक ओर प्रधानाध्यापक के विरुद्ध तरह-तरह के हथकंडे अपनाने शुरू कर दिए थे, वहा प्रधानाध्यापक ने भी सभी तरह की तैयारियां करनी शुरू कर दी थी। वैसे वह कोई तैयारी नही करते थे परन्तु उनकी कार्य संचालन की पद्धति ही ऐसी थी कि वह हर वक्त हथियारों से लैस रहते थे। इसीलिए हमारे पुरखों ने ठीक ही कहा है कि भगवान उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं। उन पर हर ओर से आक्रमण करते रहते। पर उन्होंने अपने शरीर को इस प्रकार आक्रमण प्रूफ बना लिया था कि आक्रमणकर्ता स्वयं धराशायी हो जाता और वह एक विजयी मुस्कान अपने चेहरे तक सीमित रखकर फिर बड़ी तन्मयता से अपने काम में जुट जाते।

विपक्षी दल के सभी आक्रमण इस वीर योद्धा के लिए असफल सिद्ध हुए। अनेक प्रकार के विष बुझे तीर उनकी आलोचना तथा बदनामी के, उनके शरीर पर छोड़े गए। पब्लिक को इस युद्ध मे आमन्त्रित किया गया। हाई कमाण्ड अर्थात् शिक्षा विभाग को सूचना भेजी गई।

प्रधानाध्यापक इस शीत युद्ध मे हमेशा कहते पाए जाते कि "सांच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप। जाके हृदय सांच है ताके हृदय आप।"

सच्चे हृदय वाले प्रधानाध्यापक हमेशा विजयी घोषित हुए।

मैडम वर्मा व प्रधान अध्यापक का शीत युद्ध सैद्धांतिक तौर पर अभी तक समाप्त नही हुआ था। सीमा पर छुटपुट जवाबी हमलों की वारदातें होती रहती थी। पर ये वारदातें इतनी संगीन नही होती जिससे पाठशाला की प्रगति में अवरोध उत्पन्न हो। पाठशाला के कार्यक्रम कार्य प्रणाली दिनचर्या अपनी पूर्व निर्धारित पद्धति के अनुसार चल रहे थे। नवाब साहब को प्रधानाध्यापक का समर्थन प्राप्त था और प्रधानाध्यापक को नवाब

साहब का। यह स्वाभाविक ही है नवाब साहब के पीछे उनकी महबूबा भी उन्हीं का समर्थन कर रही थी। इस विषय पर चिन्तन करने की बीमारी मुझे लग गई। चिन्तन चूंकि दिन में शुरू किया था और उस समय पाठशाला में तफरीह थी इसके बाद कक्षायें लगनी थी। तफरीह खत्म होने के बाद भी शिक्षकों का समूह देर तक धूप सेंकता आजकल के हालात पर तप्सरा पेश करता रहा। पर हम थे जो गम्भीर रूप से चिन्तन ग्रस्त हो गए थे। चेहरे से लगता था कि गम्भीर रूप से रोग ग्रस्त हो गए हैं। चिन्तन ग्रस्त होना भी अपने आप में एक बहुत बडी उपलब्धि है हमारा मन मस्तिष्क किन्हीं अज्ञात कन्दराओं मे भटक रहा था। ये कन्दरायें दूर नहीं थी पाठशाला की बहुआयामी स्थितियाँ थी जिनके प्रत्येक कोनों का हम बौद्धिक मुआयना कर रहे थे कि आखिर इस संघर्ष शीत युद्ध के पीछे कौन अदृश्य शक्तियां हैं। मोटे तौर पर इसका मूल कारण एक मूर्ख भी अच्छी तरह समझ सकता है। हम इस पर शोध कार्य करना चाहते थे। यह शोध कार्य इसके दार्शनिक पक्ष पर था। हमारा चेहरा अब एक साधारण शिक्षक का नहीं रहा। बल्कि वह दार्शनिक का चेहरा था। हमारे लटके चेहरे को देखकर जरूर दूसरों को शंका हुई होगी कि यह दार्शनिक कम्बख्त कहीं सी० आई० ए० का एजेण्ट तो नहीं है। उन्हें इस परिवर्तन के पीछे किसी षड्यंत्र की बू आ गई थी। उस दिन पाठशाला में चिन्तन ग्रस्त होकर हम शाम को अपने दौलतखाने में भी चेहरा लटकाए रहे। पत्नी ने चिल्ला कर कहा—"मियां, यह थोबड़ा किसका उधार ले आए हो? यह पकड़ो झोला और सब्जी खरीद कर लाओ नहीं तो शाम को रोटी नहीं मिलेगी।"

खैर इन पचड़ों से उबरकर हम अपनी खाट पर रूखी-सूखी निगलकर लेटे। दार्शनिक का चेहरा हमारे चेहरे पर फिर था। बड़ी नाजुक स्थिति थी। एक बहुत बड़ा अनुसंधान होने वाला था। भारतीय राजनीति से लेकर अध्यात्मवाद तक एक बहुत बडा निष्कर्ष निकलने जा रहा था। खाट पर लेटे-लेटे हम दिमागी कसरत करते रहे। हमारी पत्नी इस रूहानी कसरत से बेफिक्र खर्राटे भरती सोती रही। चारों ओर की निस्तब्धता को पत्नी के खुर्राटे भंग कर रहे थे। कई बार जी में आया कि इस नाचीज को उठाकर बाहर फेंक दें और अन्दर से दरवाजा बन्द कर के निश्चिन्त होकर चिन्तन करें।

पत्नी के खुर्राटे देर तक नहीं चले। शायद उसके खुर्राटों की चाबी खत्म हो गई थी। अत अब सिर्फ हम थे और हमारा चिन्तन था। अचानक जैसे एक भीषण विस्फोट हुआ। चारों ओर एक दिव्य आलोक प्रकट हुआ और फिर एक छोटा-सा प्रकाश बिन्दु बनकर हमारी समझदानी में घुस गया, फिर आकाशवाणी हुई। आकाशवाणी इस प्रकार थी, "बरखुरदार, जिस गम्भीर चिन्तन में तुम अपनी डेढ पसली की देह को सुखा रहे हो वह निहायत बचकाना चिन्तन है। तुम्हारी पाठशाला में जो कुछ हो रहा है वह हमारे देश के प्रजातान्त्रिक विचारों का प्रतिरूप है। लोकतन्त्र में हमारी आस्था है। उसे तब तक जीवित रखना है जब तक हम जिन्दा हैं। हम जिन्दा हैं इसलिए यह लोकतन्त्र जिन्दा है। जिस दिन लोकतन्त्र मर जायेगा उस दिन हम भी मर जायेंगे।"

आकाशवाणी का अर्थ हमारी छोटी समझदानी में नहीं घुसा। इतना कुछ पल्ले पड़ा कि इसमें लोकतन्त्र शब्द को कई बार दुहराया गया था। जिस दिन लोकतन्त्र मर जायेगा हम भी मर जायेंगे। लोकतन्त्र तो हमारी पाठशाला में था नहीं। फिर किसके मरने की बात की जा रही है। कुछ भी समझ में नहीं आया। फिर याद आया कि लोकतन्त्र तो नहीं पर लोकनाथ नाम का एक टीचर हमारी पाठशाला में है। तो क्या उसके मरने पर हमारा मरना निर्भर करता है। हमारी अन्तरात्मा ने जानना चाहा।

फिर आकाशवाणी हुई, "बस, अक्ल से काम लो। चिन्तन करो। जिस दिन तुमने सोचना शुरू किया भारत में उथल-पुथल हो जावेगी। तुम अपने काम में बिना सोचे-समझे लगे रहो। देश भक्त बनो, बच्चों को निष्ठावान बनाओ। उन्हें अच्छे नागरिक के गुण सिखाओ। परनिन्दा से दूर रहो। अपनी गौरवशाली गुरु परम्परा को कायम रखो। तुम्हारी पाठ-शाला में जो कुछ हो रहा है उसकी जानकारी हमें है। जो बुरा करता है उसे उसी प्रकार का फल मिलता है। तुम्हें शायद पता नहीं तुम्हारे चिन्तन से पाठशाला को कितना नुकसान हो रहा है। हमें पता चला है कि तुम पाठशाला में अव्यवस्था की सी स्थिति उत्पन्न करने के लिए विरक्षी दल में मिले हो और सत्ताधारी दल में भी। इस डबल एजेन्टी पर हम काफी नाराज हैं। तुम्हें यह अन्तिम चेतावनी दी जाती है कि तुम देश में मनाए

जा रहे अनुशासन पर्व के अवसर पर अनुशासन हीनता की सी स्थिति उत्पन्न करने जा रहे हो। इसका परिणाम तुम जानते हो क्या होगा ? मौसा।"

अचानक हमारी तंद्रा भंग हुई। चिन्तन का क्रम टूटा। कुहरा छंटा। सब कुछ पाक-साफ नजर आने लगा। देश में आपात स्थिति लागू हो चुकी थी और यह आकाशवाणी जो हमें हुई थी वह कुछ और न होकर शिक्षा विभाग से आई हुई ऐसी गोली थी जिसने हमारे स्वस्थ्य चिन्तन को एक ही बार में धराशायी कर दिया। और दूसरे ही दिन हमने अनुशासन पर्व के उपलक्ष में एक क्रांतिकारी और प्रगतिशील कविता लिखकर पाठशाला की प्रार्थना सभा में सुना दी —"मुख्याध्यापक जिस दिन से इस पाठशाला में आए हैं दिन दुगनी रात चौगुनी उन्नति हम कर पाए हैं।"

छः

मैंने ऊपर कहा था कि उस समय देश मे आपात स्थिति लागू हो चुकी थी। आपात स्थिति लगने से कुछ पहले यहाँ लोकतान्त्रिक सरकार बनी थी। राज्य मे नई सरकार बनने अथवा बनाने में केन्द्र का भरपूर सहयोग था। केन्द्र के बिना यह लोकतान्त्रिक सरकार बन नहीं सकती थी। आपको पता है कि कोई भी परिवर्तन चाहे वह क्रांति संबंधी हो अथवा युद्धगत। कुछ बहादुरो और डरपोकों को जन्म देता है। इस नई आजादी ने जो राज्य के इतिहास मे उदित हुई थी कुछ उच्च कोटि के निकृष्टतम प्राणियो को तुरन्त जन्म दे दिया। उनमे एक मास्टर भी था जिसे राज्य सरकार ने तुरन्त राज्य के शिक्षा निर्देशक पद पर सुशोभित कर दिया।

इस गौरवशाली पद पर सुशोभित होते ही उन्होंने राज्य की अनेक पाठशालाओ का नेहरू शैली मे तूफानी दौरा किया। और जब तक वह तूफानी दौरे से लौट कर विभाग मे पहुंचे थे कि 5 सितम्बर का दिन आ गया। निदेशक महोदय ने तुरन्त एक विशुद्ध शाकाहारी फरमान जारी कर दिया कि इस पवित्र तथा गौरवशाली महान दिवस जिसे शिक्षक दिवस के रूप मे मनाया जाता है, के उपलक्ष में प्रत्येक शिक्षक आज से धूम्रपान और मद्यपान न करने की सौगन्ध खाता है। बिना किसी को पूछे जनमत संग्रह के बगैर ही हजारो की संख्या में मुद्रित आदेश, नहीं, शपथ-पत्र पाठशालाओं में पहुँच गये और सभी को हिदायत दी गई उस पर हस्ताक्षर करके इस महान दिवस के उपलक्ष मे स्वयं को सुधारने की सौगंध खाये।

जब यह शपथ-पत्र आया तो शिक्षकों में खलबली मच गई। यह एक ऐसा समय था जब देश एक महान परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। अत: शिक्षकों ने बिना किसी हीलो-हुज्जत के चुपचाप उस शपथनामे पर हस्ताक्षर कर दिए और इस सौगंध को पूरा करने को कटिबद्ध हो गए। हमारे जैसे कुछ आदर्शवादी जिनकी रग-रग मे संस्कृति, परम्परा और अध्यात्म का खून दौड़ता है, बाकायदा धूम्रपान के नाम पर जो मजदूर बीड़ी पीने

या खैनी फाँकते थे सचमुच कुछ दिनों के लिए सौगंध को पूरा करने के लिये डटे रहे। पर इसी अवधि में स्वभाव इतना चिड़चिड़ा हो गया कि बच्चों के पीटे जाने को प्रतिशतता बढ़ गई। हम लोगों ने विद्रोही जैसी मुद्रा अख्तियार कर ली थी जो अनुशासन पर्व में खलबली मचा सकती थी। अन्दर दुबका बैठा भीरू मन चिन्तन की पगडंडी पर खड़ा हो गया कि प्रासंगिक क्या है ? तफरीह में दौड़कर नीचे की पान गुमटी में जाकर अपने पुराने परिचित राजू पान वाले से खाको कैप्सटन माँगी। उसने एक हिकारत भरी नजर से हमारी ओर देखा क्योंकि वह भी हमारे सामूहिक हृदय परिवर्तन की बात को जानता था। हम किसी एक जगह पर जाकर धूम्रपान करके चिन्तन की श्रृंखला को तोड़ना चाहते थे। रंगे हाथों पकड़े जाने का डर था। और जगह नही मिली तो सार्वजनिक पाखाने में गये। बड़ी मुश्तैदी से कश खींच रहे थे कि अन्धेरे में परले कोने में आग का एक शोला सुलगता और धुआँ देता हुआ दिखाई दिया। हमने तुरन्त बीड़ी बुझा दी परन्तु वह अभी तक कश खींचे जा रहा था। हम आश्वस्त थे कि उसने हमें देखा नहीं था और हमने उसे रंगे हाथों पकड़ लिया था। हम इस "पवित्र" स्थल पर दीवार से सटे सांस थामे खड़े रहे चोरों की तरह। परले कोने से बीड़ी के कश खींचने वाले की बीड़ी जब खत्म हुई तो उसमें कुछ हरकत हुई। हमने देखा वह आकृति धीरे-धीरे हमारी ओर आ रही है। सांस रोके दीवार से सटे खड़े रहे। इस "पवित्र" स्थल की दीवारों पर लिखे कुछ शुद्ध वाक्य और तस्वीरें हमारी पीठ में शूलों की तरह चुभ रहे थे। आकृति ने फुर्ती से हमारा कालर पकड़ा और जब तक हम सँभलते, तब तक हम उजाले में थे। जब चेतना लौटी, तो देखा हमें पकड़ने वाला मुस्करा रहा था। यह कोई और नहीं था बल्कि मास्टर लोकनाथ था। उसने एक मट्ठी सी गाली अनुशासन के प्रणेताओं के सम्मान में तोप की तरह दागी और बोला, "बच्चू, हमारी सी० आई० डी० कर रहा था ? हमने तो तुम्हें उसी समय पहचान लिया था जिस समय तुमने बीड़ी जलाने के लिए तीली जलाई थी। तेरे थोबड़े के दर्शन तो हमने उसी समय कर लिए थे।"

हम दोनों जोर से हँसे। सौगन्ध को पूरा करने के लिए एक एक बीड़ी

और पी और चेहरे पर अनुशासन पर्व की मुद्रा ओढ़कर पाठशाला के अहाते में दाखिल हुये।

देश में चुनावों के बाद नई सरकारें बनती हैं। राज्य की राजधानियों में, देश की राजधानी में बड़ी महत्वपूर्ण कुर्सियों पर नये-नये चेहरों के लोग बैठते हैं। नई घोषणाएं होती हैं और बड़े मुस्तैदी के साथ अपने-अपने लँगोट कस लेते हैं। और काम में जुट जाते हैं परन्तु पिछले तीस-बत्तीस सालों में देश जिस प्रशासनिक ढांचे पर चल रहा है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। मेरे कहने का मतलब यह है कि देश की सरकारें सचिवों और विभागीय नौकरशाहों के आदेशों पर चलती हैं। उनके प्रशासन करने की पद्धति नई सरकार बदलने पर भी पूर्ववत बरकरार रहती हैं। इस पाठशाला के इतिहास में मैडम और संस्कृति तथा अध्यात्म के पोषक प्रधानाध्यापक के बाद आपातकालीन प्रोडक्ट यह नये प्रधानाध्यापक इस पाठशाला के प्रशासनिक ढांचे में रद्दोबदल करके अपने पद को संकट में नहीं डाल सकते थे। उन्होंने यहां आने से पहले ही नितान्त खुफिया तरीके से इस क्षेत्र का एक दो बार दौरा करके इस पाठशाला की आन्तरिक स्थिति का जायजा ले लिया था।

नवाब साहब का नामकरण हम अपनी ओर से पाठकों की सुविधा का ध्यान रखते हुए करनैल सिंह कर रहे हैं। इस प्रधानाध्यापक ने अपने सुलझे हुये दिमाग तथा व्यक्तित्व से आते ही पाठशाला की काया पलट दी। करनैल सिंह का पद न केवल उन्होंने बनाये रखा बल्कि धांसू किस्म के अध्यापकों से महत्वपूर्ण पोर्टफोलियो छीन कर उन्हें सौंप दिये गये। करनैल सिंह की चहेती को भी उतने ही बराबरी के पोर्टफोलियो थमा दिया जिसमें पाठशाला में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका की नींव गाड़ दी गई तथा दोनों की नई गतिविधियों के लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया।

पाठशाला की सर्वांगीण प्रगति के लिए उनके बहु आयामी व्यक्तित्व के रंग-रोगन से पाठशाला चंद दिनों के भीतर ही चमकने लग गई। आमा-मुक्त हो गई। शुरू से चली आ रही ढेर सी प्रणालियों में परिवर्तन होने लगा। पिछले तीस सालों में उन्होंने पब्लिक स्कूलों की शैली में परिवर्तन करने के लिए अपनी काल्पनिक व्यवहारिकता को व्यापकता दी।

देश में किसी नई योजना को शुरू करने के लिए पहले योजना आयोग अपनी रपट तैयार करता है। कई हफ्तों और महीनों के निरन्तर परिश्रम से कच्चा चिट्ठा तैयार किया जाता है और फिर राज्यसभा तथा लोक सभा उन्हें पारित करके सम्बन्धित विभागों को भेज देती है। योजना आयोग का काम यह हुआ कि वार्षिक रिपोर्ट में अमुक-अमुक विभाग के लिए निर्धारित राशि से बनने वाली परियोजनाओं का हवाला दिया जाता है। आकाशवाणी से समाचार प्रसारित किये जाते हैं। विकासशील देशों के आँकड़ों को तैयार करने वाली संस्थाएं हमारे देश की उत्तरोत्तर प्रगति पर अपनी मोहरें लगा देती हैं।

इसी प्रकार पाठशाला में जब नई शैक्षणिक पद्धति (जिसमें समुद्र पार की भाषा पर ज्यादा ध्यान देने का प्रस्ताव पारित किया गया था।) को आगे बढ़ाने के लिए स्वतन्त्रता प्राप्ति के पहले से पढ़ाते आ रहे पाँचवी कक्षा तक पढ़े मास्टरों का योगदान और सेवायें लेने के लिए ऐसे मास्टर स्कूलों में मौजूद होते ही थे। मजे की बात यह है कि इन्हीं मास्टरों के बूते पर नये प्रधानाध्यापक ने पाठशाला को आगे बढ़ाना था। वैसे देश का प्रशासन ही अंगूठा छाप विधायकों और संसद सदस्यों के बूते पर चल रहा है। इसलिए इसी प्रकार के मास्टरों के कन्धों पर राष्ट्र या पाठशाला की पढ़ाई को छोड़ दिये जाने से आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

पाठशाला को इस प्रकार के वर्गीकरण में लाने वाले अध्यापकों ने पाठशाला का वातावरण अंग्रेजीमय बनाना शुरू कर दिया। जो शिक्षक जीवन भर खुद एक प्रार्थना-पत्र तक शुद्ध अंग्रेजी में नहीं लिख सकते थे, वे अंग्रेजी कैसे पढ़ाते होंगे, इसकी कल्पना आप स्वयं कर सकते हैं।

शालिग्राम नामक शिक्षक हैं हमारी पाठशाला में। काफी सालों से वह देश की नई पीढ़ी को शिक्षित करते आ रहे हैं। बाहर से दिखने में साधारण पर अन्दर से कांइयां किस्म के इस मास्टर के चेहरे पर एक बड़े विद्वान का पोस्टर चिपका रहता है। यह पोस्टर उनके चेहरे पर शिक्षा विभाग ने उनकी उल्लेखनीय सेवाओं के उपलक्ष में नहीं चिपकाया है बल्कि जनाब ने खुद ही चिपका लिया है। इस मास्टर के पास एक अन्य उल्लेखनीय हुनर है जो उसे पैदाइशी तौर पर मिला है अथवा उसके टुच्चे व्यक्ति-

त्व का एक टुच्चा पक्ष है। वह पक्ष है—दूसरों की जासूसी करना। कौन किस करवट सोता है, दिन में कितनी बार बाथरूम जाता है किसकी बीबी किसके साथ बातें कर रही थी, ये सूचनायें वह हमें प्रतिदिन उपलब्ध कराता है। अपनी अतिरिक्त प्रशंसा करना उसकी हॉबी है। जब हम नये नये इस पाठशाला में आये थे तो वह एक जासूस की सी निगाह हम पर फेंक बुद्धिजीवियों की तरह बनने की कोशिश करता नजर आया। हमने जब उसे दुआ सलाम की थी तो इसने एक ऊंचे ओहदे वाले अफसर की तरह हमारी दुआ सलाम का कोई उत्तर नहीं दिया था। उसके चेहरे पर हर समय एक सौम्य-सी रहती थी। हमने जिस दिन पहले पहल इस पाठशाला में आकर अपने पवित्र चरणों की धूलि से इसका उद्धार किया था, उसी दिन इस मास्टर के उक्त व्यवहार में हमें लगा था कि हो सकता है कि वह सबसे ज्यादा पढ़ा लिखा हो। बातों ही बातों में उसने कह भी दिया था कि प्राथमिक कक्षाओं की अंग्रेजी वह जिस तरीके से पढ़ा सकता है, उसी प्रकार कोई टीचर पढ़ा कर तो देखे। "पढ़ाकर तो देखे" वाले रौब के पीछे दो मान्यताएं काम कर रही थीं। एक यह कि उसे अतिरिक्त विश्वास था कि उससे बढ़िया और कोई पढ़ा नहीं सकता था और दूसरी मान्यता यह थी कि यह विषय अन्य किसी टीचर के पास जाना ही नहीं चाहिये। आशा है आप उसकी धौंस का अर्थ समझ गये होंगे। धन्यवाद।

तो इसी मास्टर की कक्षा में हम आपको ले चलते हैं ताकि आप उसके पढ़ाने के अभूतपूर्व ढंग का (जो विश्व के किसी भी शिक्षा शास्त्री को जमीन सुंघा दे) अवलोकन कर सकें।

यह तो स्थापित सत्य है कि वह घण्टी बजने के काफी बाद कक्षा में प्रवेश करता है। ठीक समय पर पहुंच कर वह काफी परिश्रम से प्राप्त की परंपरा को तोड़ना नहीं चाहता।

कक्षा में पहले से ही बच्चे कुंग-फू और कराटे का अभ्यास कर रहे होते हैं। उसके प्रवेश पर बड़े नाटकीय ढंग से बच्चे "गुड मार्निंग" करके फिर अपनी पोजीशनें संभाल लेते हैं। मास्टर बुद्धिजीवी है और बच्चे उसके चेहरे के इस पोस्टर को वर्षों से देखते आये हैं अर्थात् कई बच्चे एक ही कक्षा में तीन-तीन साल विधिवत बैठे रहने का अभ्यास कर चुके होते हैं।

बच्चे चूंकि मार्शियल स्पिरिट के हैं अतः मास्टर अंग्रेजी किताब लेकर एक पाठ "अकबर दी ग्रेट" पढ़ाने लग जाता है। बच्चे अपनी स्वाभाविक मुद्रा में धीरे-धीरे अकबर महान से साक्षात्कार करने में सफल होते हैं। वह पढ़ाना शुरू करता है, "अकबर वाज़ बॉर्न ऑन..." दो चार पंक्तियां जोर से पढ़ाकर वह एक भैंगे लड़के को उठने को कहता है। वह लड़के को पढ़ने के लिए कहता है। लड़का दरवाजे की ओर देख रहा होता है। मास्टर बौखला उठता है—"कुत्ते की दुम, 'डोर' की ओर क्या देखता है?'

"सर, मैं तो आपको देख रहा हूं।"

एक तो करेला दूसरा नीम चढ़ा। लड़का एक तो भैंगा है और उसके ऊपर नाक से बोलता है। इसके साथ ही वह स्पष्टवादी है। बेचारा भैंगा होने के कारण वास्तव में जब वह मास्टर की ओर देख रहा होता तो मास्टर साहब उसे दरवाजे की ओर देख रहा हुआ पाते। मास्टर बुद्धि-जीवी होने के कारण इतने सालों से यह थाह नहीं पा सका था कि लड़का भैंगा है।

"कुत्ते की दुम! (यह उसका तकिया कलाम है) तेरा बाप कब पैदा हुआ था?"

"सर, पता नही।"

सटाक्! लड़का मारंगी रेटने लग जाता है।

"ईडियट, अपने बाप के जन्म के बारे में भी नही जानता? कहां था तेरा ध्यान?"

लड़का हिचकियां लेता कहता है—"सर, बापू ने मेरे को बताया नही है। मन्ने बेरा कोनि।"

"तेरा बाप मीन्स अकबर।"

मास्टर लड़के को रोता छोड़कर अकबर के अन्य बेटों की ओर मुखा-तिब होता है।

"अकबर वाज़ बॉर्न ऑन..."

"ऑन ..!"

"शाबास। देख नामाकूल, तेरे सारे भाई जानते हैं कि तेरा पैदा हुआ था। तू जरूर अकबर की मौलिक सन्तान नही।"

सात

यह जो स्कूटर फर्राटे से गया है, उसके सवार का परिचय तो नये प्रधानाध्यापक के रूप मे आप पा चुके हैं। इन्होने पिछले ही दिनो सिगरेट छोडकर किश्तों मे यह स्कूटर खरीद ली है। यह इनकी महानता है कि इन्होंने स्कूल पढते समय से लगी सिगरेटों की लत को आज तीस साल के बाद तत्काल छोड़ दिया था और मीठी सौफ लेनी शुरू कर दी थी। उनकी मेज की दराज मे सौंफ की पुड़िया पडी रहती थी। और वह प्राय. सौफ ही फाँकते रहते।

पाठशाला से छुट्टी के बाद क्वार्टर पर वह टमाटरों का सूप पीते हैं। कमरे में पहुँचते ही सूप की यादगार उन्हे उसी प्रकार हो जाती है जिस प्रकार दफ्तर में कुर्सी पर बैठते ही दराज में रखी सौंफ की। वह किसी शिक्षाशास्त्री का एक तजुरबा भी सुनाते देखे गए हैं जो उसने किसी कुत्ते या बिल्ली पर किया था। अंग्रेजी में उस तजुरबे का नाम याद नही रहा। पर था कुछ इस प्रकार कि घंटी बजते ही कुत्ते या बिल्ली को भूख की याद आ जाती थी और वह लार टपकाने लग जाता था। इनकी स्थिति ऐसी ही है।

बैठक में आराम से बैठकर वह पत्नी जी को आवाज देते हैं। बेचारी दिन भर टमाटरों के सूप की पतीली चढ़ा रखती है और उनके आते ही परोस देती है। पास बैठकर एक घरेलू किस्म के पखे से श्रीमान को ठडक पहुँचाती है ताकि सूप के तापक्रम और शरीर के तापक्रम में कोई गड़बड़ी होने से उनकी सदाबहार सेहत पर आँच न आए। जिस पखे से वह श्रीमान को ठंडक पहुँचा रही होती है, वह उनके ससुर महाराज को एक यजमान ने दिया था। सभवतः इसी पंखे से ही उनके संस्कृति प्रेम की झलक मिलती है। नहीं तो बंदा इस उपमहाद्वीप की प्रत्येक चीज को, सिर्फ अपने सिवा तथा आग्ल भाषा के सिवा, सभी को हीन दृष्टि से देखता है। लगता है, उनका निर्माण ही किसी विशिष्ट किस्म की वस्तुओ से हुआ हो, जो इस

महाद्वीप तो क्या इस ग्रह पर भी उपलब्ध न हो। अन्य ग्रहों की बात नहीं कर सकता, क्योंकि वहाँ पर इस प्रकार के विशिष्ट जीवों के होने की आशा नहीं की जा सकती है जो इनकी बिरादरी से मेल खा सकें।

श्रीमान एक घूंट सूप का लेते हैं। उन्हें सूप का तापक्रम बीस में उन्नीस लगता है। बोलते हैं—"भाई, सुनो, सूप तुम अच्छी तरह बनाना नहीं जानती हो। दरअसल इट इज़..."

"छोड़िए, अपनी दार्शनिकता! तुम मेरे किसी काम को पसन्द भी करते हो?"

"तुम मेरी बात समझी नहीं।" साहब का स्पष्टीकरण।

"दुनिया में भगवान ने जब समझदारों को बनाया था तो तुम्हें ही पहला और आखिरी समझदार बनाया होगा न! हम तो कुछ जानते ही नहीं। सारी समझदारी तुम्हारे ही पास जो ठहरी!"

साहब बिना किसी हीलो-हुज्जत के सूप पी जाते हैं। वे सूप पीकर खाट पर टाँग पसार कर लेट जाते हैं। सहसा उनके पेट में गैस भर जाती है। वह बिटिया रुकमणि को आवाज देते हैं—"बेटे, मेरी पानी की बोतल तो लाना।" वह उबला पानी बोतल में रख लेते हैं। कई बार उन्हें पाठशाला के चपरासी को "जा मेरी बोतल ला" कहते सुनते अजनबी चौंक जाते हैं।

हम लोग तो उनका चेहरा सुबह पाठशाला आते ही भाँप जाते हैं कि आज क्या होने वाला है। किस पर मेहरबान होंगे साहब और किस पर खफा। पर चूंकि अध्यापक नामक जीव बड़ा जीवट का होता है। जीवन की मार उसे इस कद्र वातानुकूल बना देती है कि किसी भी मौसम का, कहने का मतलब यह कि प्रधानाध्यापक के भाषणों का तथा चेतावनियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। आखिर ऋषि-मुनियों, तपस्वियों की सन्तानें हैं न, हम। निर्लिप्त भाव से क्यों पड़े रहेंगे। क्या मजाल कि कोई आघातीत प्रभाव हम पर पड़ जाए।

हाँ, दरअसल बात "साहब की बोतल" पर चल रही थी। रुकमणि सुराही के ठंडे पानी का गिलास उन्हें थमा देती है। डाइजीन की टिकिया निगल जाने के बाद उन्हें पता चलता है कि पानी उनकी बोतल का नहीं

है। कमरे के कोने में खड़ी रुकमणि खी...खी करके हँस रही होती है। खिसिया कर कृत्रिम क्रोध से डाँटते हैं।—"तुम बड़ी शरीर होती जा रही हो ?"

पत्नी को सिर बांध कर लेटे देख वह पूछते हैं "क्या हुआ तुम्हें ? सिर दर्द है ? एस्प्रो खा लो न एक ?"

पत्नी झल्लाई-सी उठ बैठती है कहती है—"शादी से पहले मैंने एक टिकिया तक नहीं खाई थी। यह सब आपकी समझदारी का परिणाम है कि आज बिना टिकिया खाए मैं हिल-डुल नहीं सकती। भाषणों की खुराक तो सुबह शाम पीनी ही पड़ती है। ज्यादा समझदार हो न !"

चाहे टमाटर का सूप हो या किसी शिक्षा शास्त्री का सिद्धान्त—सभी के बारे में अनुसन्धानात्मक और अधिकारस्वरूप ज्ञान बघारने में उनका कोई मैच नहीं है।

उनका यह ज्ञान रखने का दावा ही नहीं परन्तु उन्होंने सभी ग्रन्थों को चट कर जाने का भ्रम भी पाल रखा है। परन्तु मजे की बात यह है कि अभी तक उनके कमरे में स्कूली रजिस्टरों, एक अदद डिक्शनरी तथा अचार मुरब्बे बनाने वाली एक किताब के अलावा कोई और ग्रंथ या पुस्तक नहीं है। घण्टों किसी विषय पर बातें करना उनकी हाबी है। और मजा तब आता है जब वह मोदी की दुकान पर सापेक्षवाद के सिद्धान्त पर भाषण देते हुए रंगे हाथों पकड़े जाते हैं। उनकी बात को अक्सर आम आदमी समझता ही नहीं। यदि दुर्भाग्य से समझ जाने पर उनकी बात काट देने की अनाधिकार चेष्टा कर ले तो वह कहते हैं—"आई डू एग्री विद यू मि० फलाना बट...।" दूसरा आदमी चुप हो जाता है, नहीं तो उनके भाषण को पीने का कटु यथार्थ उसे भोगना ही पड़ता है। उनकी यह आदत क्लास रूम में भी वैसी ही है और खाना खाते समय पत्नी के साथ भी। पत्नी यदि कुछ सब्जी और पराठे लेने को कहती हैं तो आदतन कह उठते हैं—"आई डू एग्री मि०—" पत्नी एक आह भर कर रह जाती है।

सभी विषयों पर अधिकारपूर्ण ज्ञान रखने वाले सभी हमारे प्रधानाध्यापक छोटे-मोटे चिकित्सक भी हैं। चिकित्सा में उनकी स्थायी ग्राहक उनकी पत्नी है और उनकी दवाइयों और हिदायतों का जो असर हुआ है,

उसके बारे में पीछे कहा जा चुका है।

हुआ यह कि एक बार मैं पेट में गैस भर जाने से परेशान था। कुछ पचता नहीं था और भूख भी नहीं लगती थी। पेट फूला रहता था। एक पसली की सेहत पर तोंद निकली देखकर पाठशाला की अविवाहित शिक्षिकाओं के मजाक करने का एक अच्छा खासा माध्यम बन चुके थे हम। कक्षा में पढ़ाने जाते तो जितनी कोशिश पेट को दबाने की करते थे उतने ही चेहरे पर टंगी विवशता पर बच्चे हंसने लगते थे। बुरी हालत थी जनाब।

मरियल चेहरा लटकाए और बढ़ी हुई तोंद को देखकर हमारे प्रधानाध्यापक ने हमारे शरीर का एक ही नजर से एक्स-रे के साथ-साथ पोस्टमार्टम भी कर दिया। मैंने 'डाक्टर' साहब को अपनी दु:ख भरी दास्तां सुनाई तो उन्होंने भाषण की पहली खुराक में चिकित्सा क्षेत्र की तमाम जानकारी मगज में उड़ेल दी जिसका रत्ती भर भी असर मेरी सेहत पर नहीं हुआ। होता भी कैसे? कुछ मगज में घुसे तब न? बोले—"तुम्हारी आंतें कमजोर तो है ही। दरअसल तुम लोग नियम के पक्के नहीं। दिन में पाखाने कितनी बार जाते हो?"

—"जी, दस बार।"

"बाप रे!" उन्होंने आंखें फाड़कर हमारी ओर इस प्रकार देखा जैसे हमने कोई बड़ी हैरानी की बात कह दी हो। फिर बोले—"भई तुम लोग नियम के पक्के नहीं हो। हमें देखो, हम सभी काम नियम और समय पर करते हैं। पाखाने भी हम दुबारा नहीं जाते। कहावत है—एक बार जोगी, दो बार भोगी, तीन बार रोगी—वैसे गैस फार्म हो जाने पर तुम्हें लौकी की खीर खानी चाहिए, टमाटरों का सूप पीना चाहिए।

इतना कह कर उन्होंने जेब से डाइजीन की एक टिकिया निकाली और मुंह में डालकर चबाने लग गए।

—"क्या आपके पेट में भी गैस फार्म हो गई है।" ड्राइंग मास्टर मिश्रा ने पूछा।

—"मि॰ मिश्रा, आई डू एग्री विद यू बट मिक इज दिस कि जब से मैंने टोमैटो सूप पीना शुरू किया है, पेट में गैस फार्म होने लग गई है। और

पेट भी खराब रहता है। सुबह चार-पाँच बार पाखाने न जाऊँ तो पेट खुलता ही नहीं।"

हम और मिश्रा एक दूसरे के मुँह की ओर देखते रह जाते हैं।

पाठशाला की आधी छुट्टी हुई है। नवें वर्ग में दूर से आने वाले विद्यार्थी टिफिन ले रहे हैं। साहब चार-पाँच किताबें लेकर पढ़ाने के लिए सीढ़ियाँ चढ़ रहे होते हैं। तभी चपरासी बहादुर सिंह उनसे टकरा जाता है।

—"तुम्हारी आँखें नहीं है? दुष्ट कहीं के। यह कौन-सा पीरियड है?"

—"साहब यह टिफिन पीरेट है!" बहादुर सिंह के गले से मुश्किल से आवाज निकलती है।

—"नानसेन्स!" वह बहादुर सिंह को निगल जाने की निगाह से देखते है। तीन-चार लड़के एक-दूसरे के पीछे भागते-निकलते हैं और कारिडोर में भौंगड़ा मचाना शुरू कर देते हैं। उन्होंने प्रधानाध्यापक को देखा नहीं होता है। साहब कभी लड़कों को तो कभी बहादुर सिंह को देखते है। लड़कों ने गीदड़ों की सी आवाज निकालनी शुरू कर दी है। वह बड़बड़ाते हुए और देश की जनसंख्या बढ़ाने वालों को कोसते सीढ़ियाँ उतर रहे होते हैं।

छठे वर्ग में एक लड़का गले को उँगलियों से बजा कर वीणा की सी ध्वनि निकाल रहा है और दूसरा लड़का देवानन्द (हमारे अभिभावक बच्चों के नाम अभिनेताओं के नामों पर रखने लगे है जैसे देवानन्द अग्रवाल। वैसे हमारी पाठशाला में एक और अभिनेता है शम्मीकपूर! उनके नाम के 'शम्मी कपूर' के आगे 'थापा' शब्द भी है तो पूरा नाम है—शम्मी कपूर थापा! है न दिलचस्प बात!) हाथ से साँप का फन बनाकर वीणा की ध्वनि पर नाच रहा है।

साँप और सपेरे का खेल चल रहा है। बाकी क्लास उछल कूद कर

हो-हल्ला मचाती लुत्फ ले रही है। पीरियड आंग्ल भाषा का है और इस पीरियड में पढाते भी प्रधानाध्यापक ही हैं।

साहब जब दफ्तर से निकल कर कक्षा में आ ही रहे होते हैं, तभी कोई महानुभाव उनसे किसी आवश्यक काम के लिए मिलने आते हैं। वह क्लास को सपेरों के नाच का अभ्यास करने के लिए छोड़कर महानुभाव को लेकर दफ्तर में चले जाते हैं। उन्होंने एक नजर क्लास में चल रहे खेल पर जरूर फेंक दी थी और लड़कों ने उनकी इस कृपादृष्टि में कल की पिटाई की न्यूज रील देख ली थी।

दूसरे दिन जब वह अंग्रेजी पढ़ाने आते हैं तो करीब पाँच मिनट तक किताब खोलने और बन्द करने का अभिनय करते है। उनका चेहरा खिचा-सा था और लगता था कि किसी गहरी उधेड़-बुन में लगे हैं। आँखें मूंद करके अचानक जब खोलते हैं तो कोने में पड़ी कुछ लकड़ियों पर उनकी दृष्टि पड़ती है।

"यह क्या है?"

सभी चुप।

"व्हाट इज दिस? नालायको यह क्या बला है?"

देवानन्द उठता है—"सर लकड़ियाँ हैं।"

"वो तो मैं भी देख रहा हूँ कि ये लकड़ियाँ हैं पर किसके संस्कार के लिए?"

"सर कैम्प फायर के लिए लाए हैं।"

"हूँ!" वह एक डंडा सा उठा लेते हैं और देवानन्द के पास आकर पूछते हैं "तू कल क्या कर रहा था? साँप बना था न?"

देवानन्द को जैसे साँप सूँघ गया हो। दूसरे ही क्षण तड़ाक से डंडा उसके सिर पर पड़ता है। देवानन्द ऊँ-ऊँ करके चीखना शुरू कर देता है।

अब वह दूसरी ओर मुड़ते हैं। एक मरियल से लड़के को उठाते हैं। "और तू साँप को बीणा बजाकर नचा रहा था न।" और उसके सिर पर भी तड़ाक् से प्रहार। लड़के की एक चीख निकलती है। तथा डेस्क के नीचे का फर्श भीग जाता है। बाकी लड़कों की दबी हंसी, देवानन्द की चीखें, साहब का उठा डंडा और अंग्रेजी का पीरियड....।

"नालायको, और बनो सांप और सपेरे। क्या यह स्कूल तुम्हारे बाप-दादो का है कि सांप सपेरे बने रहो। दुष्ट कहीं के।"

टन...टन...ट.न.न...बहादुर सिंह घण्टी बजा देता है। पीरियड खत्म हो जाता है।

"लिसन टू मी...टुमारो आय विल कम लाइक थण्डर स्टार्म।" वह किताबें बटोरते हे और क्लास से बाहर आ जाते हैं। पच्चीस बच्चों की इस कक्षा में एक ने भी उपरोक्त वाक्य का अर्थ नहीं समझा है। कुछ ठिठक कर वह फिर क्लास में आ जाते हैं। बच्चों के मुंह में लटके—"थैंक यू स...र" के दरम्यान फिर उनके कक्षा में आ जाने पर "गुड मार्निंग सर" "थैंक यू सर" के मिश्रित शोर में वह कहते हैं "डू यू नो ह्वाट डू यू मीन बाई थण्डर स्टार्म ? आई विल टेल यू टुमारो।" और वह बाहर आ जाते हैं। बच्चे बन्द किताबों को डेस्क के नीचे रखकर "थैंक यू सर" कह कर अगले पीरियड की किताबें कापियां निकालने लग जाते हैं।

विद्यालय के एक शिक्षक तिलकराज शर्मा का तबादला हो गया है। स्टाफ की ओर से फी आदमी एक रुपये उनहत्तर पैसे का चन्दा इकट्ठा करके उसकी विदाई का आयोजन किया जाता है। सभी चीजें, अर्थात् खाने-पीने की, चपरासी द्वारा ढाबे से मंगवाई जाती हैं। एक अदद मेज और कुर्सी पर श्री शर्मा विराजमान हैं जो अपने स्वाभाविक ठिगने कद और निरामिष आदतों के कारण सिर्फ कुर्सी से अपनी एक अदद गर्दन खोपड़ी सहित दिखाने में सफल हैं। उनकी निगाहें खोज रही हैं कि इस विदाई के समय किस हमदर्द की आंखों में आंसू हैं। जब वह देखते हैं कि कमरे के कोनों से उन्हें आंख मारने की हरकतें आलोकित होती हैं तो वह आंखें बंद करके आराध्य की आराधना में खो जाते हैं।

चपरासी समोसे और चाय रख जाता है। और सभी की निगाहें तिलकराज पर न होकर समोसों पर हैं। अचानक शर्मा का ध्यान भंग हो जाता है। जब वह आंखें खोलते हैं तो प्रधानाचार्य को अपनी ओर देखते हुए पाते हैं। प्रधानाचार्य स्वभाववश कह उठते हैं—"देखो मि० शर्मा, ऐसा करना कि तुम जिस पाठशाला में जा रहे हो, वहाँ के प्रधानाचार्य से एक पत्र मुझे लिखवा देना कि तुम सही सलामत पहुँच गए हो कि नहीं।"

श्री शर्मा अपनी निरामिष मुस्कान उन पर बिखेर कर उनकी ओर देख रहे हैं।

जब सभी के समोसे मुख महाराज के रास्ते उदर महाराज की भेंट चढ़ जाते हैं तो चाय का दौर चलता है। चाय के साथ-साथ इस पार्टी में प्रधानाचार्य का भाषण पीने को न मिले, ऐसी बात असम्भव है। वह शुरू करते हैं—"हमारी इस एक अदद पाठशाला में मेरे और करनैलसिंह को छोड़कर बाकी सभी अण्डरवेट हैं। शर्मा अण्डरवेट है, मिस लतिका, मिस दीपा, डोंगरे, थपलियाल'''आल आर अण्डरवेट।"

उनका कहना जारी है परन्तु न तो किसी का उनकी ओर ध्यान है और न ही कोई टीका-टिप्पणी कर रहा है क्योंकि उनका यह मजाक कहें या कथन इतना पुराना पड़ चुका है कि कोई उन्हें पलट कर नहीं पूछता कि जनाब, किसी के अण्डरवेट होने अथवा ओवरवेट होने पर आपकी सेहत पर क्या प्रभाव पड़ता है।

तिलकराज शर्मा किसी अज्ञात द्वीप में भटक गये लगते हैं। टेबिल पर कुछ समोसे हैं, शायद चाय भी। कोने से एक हमारे जैसे सीकिये अण्डरवेट की आवाज आती है—"जो अण्डरवेट नहीं हैं, वे ही बचे-खुचे समोसे और चाय पर लम्बा हाथ करें।" और वह साहब के भाषण पीते-पीते बदहजमी से बचने के लिये बाहर खुली हवा में आ जाता है। बाकी मास्टर खिसक रहे हैं।

यह प्रधानाध्यापक पूरे अंग्रेजीदाँ हैं। हमें तो शक है कि कहीं इनके अन्दर मैकाले की आत्मा तो नहीं घुस गई है। इस भाषा के लिए उनका जो समर्पण है, उस पर कोई प्रश्न चिह्न नहीं लगा सकता। स्कूल में ही वह इस भाषा का प्रयोग करते होते तो कोई बात नहीं थी। परन्तु उनका तो यह जीवन यापन का ही एक अंग बन चुका है। उनकी बातचीत, चाहे वह किसी शिक्षक के साथ हो या किसी पनवाड़ी के साथ, परिष्कृत अंग्रेजी और हिन्दुस्तानी की खिचड़ी होती है। कुछ उदाहरण हम आपके सामने प्रस्तुत करते हैं—

जनाब एक मिस्त्री को समझा रहे हैं कि वह अपने लड़के के स्वास्थ्य पर पूरा ध्यान रखें। लड़का काफी दुबला-पतला है।

"भई, इसमें केल्शियम की डेफिशियेन्सी हो गई है। इनफेक्ट डाइट में कुछ कैलोरी केल्शियम होनी एसेन्शियल होनी चाहिये। लंच में क्या देतेहो ?"

अब आप ही बतायें कि अनपढ़ देहाती मिस्त्री ऊपर कही गई भाषा को क्या खाक समझेगा ?

प्रधानाध्यापक को ईश्वर जाने इस बात का एहसास है या नहीं कि उनकी कही गई बात दूसरे समझते भी हैं या नहीं ? पर उनके दैनिक कार्य कलापों से इस बात की बू आती है कि हीन भाव से वह इस कद्र पीड़ित हैं जैसे किसी संक्रामक रोग से पीड़ित हों। और मजे की बात यह है कि वह अपने इस हीन भाव को छुपाने के लिये उच्च भाव का प्रदर्शन बड़े हास्यास्पद ढंग से करते देखे जाते हैं।

उनके इस प्रकार के वक्रोक्ति अलंकारों के प्रदर्शन आए दिनों पाठशाला में देखे जाते हैं।

प्रधानाध्यापक पाठशाला में अनुशासन की बिगड़ती स्थिति पर काफी चिन्तित थे। उनकी यह चिन्ता किसी नेता की चिन्ता की तुलना में बड़ी अथवा छोटी नहीं हो सकती। अध्यापकों के मंत्रीमंडल की एक आपात बैठक बुला कर अनुशासनहीनता पर विचार-विमर्श किया गया। विचार-विमर्श के बाद पाठशाला की सभा बुलाई गई।

महोदय ने तकरीबन डेढ़ घंटे तक परिष्कृत आंग्ल भाषा में रौद्र और वीर रस के मिश्रित भाव से भाषण दिया। विद्यार्थियों के चेहरे पर शान्त रस के स्थायी भाव की मक्खियां भिनभिनाती रहीं। कुछ छात्र-छात्रायें और शिक्षक-शिक्षिकायें इसी भाषण के दौरान शृंगार रस की उत्पत्ति करने का वातावरण तैयार करने में गुप्त रूप से सक्रिय रहे। इस रस उत्पत्ति के लिये उनकी नयन-भंगिमायें कारगर ढंग से सहायक सिद्ध हो रही थीं।

मिश्रित रस की इस सभा में साहब का भाषण समाप्त होने पर भी

गुप्त रूप से चल रहे इस उत्पादन में अवरोध उत्पन्न नहीं हुआ।

साहब ने अपने भाषण में पाठशाला की अनुशासनहीनता के उत्तर-दायी तत्वों से अनुशासन के कर्म निष्पादकों के लिये चेतावनी दी। पिछली पाठ-शाला में जिस प्रकार अनुशासन विभाग ईदी अमीन अर्थात् नाथ के कन्धों पर था, उसी प्रकार इस पाठशाला में मार्शल राणा पर छोड़ा गया है। इसे मार्शल की उपाधि हमने फील्ड मार्शल मानेकशा के नाम पर दी है क्योंकि जनाब दाक्लो-सूरत से फील्ड मार्शल से खतरनाक हद तक मिलते जुलते हैं। मार्शल राणा प्रधानाध्यापक के इस भाषण के दौरान अपनी मूंछो पर ताव देते रहे और डंडे को हवा में घुमा कर चश्मे के अन्दर से झांक कर उन नामी बदमाशों की ओर देखते रहे, जो अनुशासनहीनता में अपना सक्रिय सहयोग देते रहते हैं।

मार्शल राणा अपनी पिछले पच्चीस-तीस साल की मास्टरी के दौरान आज तक सिर्फ बदमाश लड़कों को पीटने के कीर्तिमान ही स्थापित कर पाये हैं, इसके अलावा उनसे और किसी विशेष योगदान की आशा रखना व्यर्थ है। गलती से वह पाठशाला में आ गये थे जो उनके लिये उपयुक्त स्थान नहीं था। उन्हें तो पुलिस विभाग में जाना चाहिये था, कम से-कम आज तक दरोगा तक की पदोन्नति तो हो गई होती।

खैर, साहब का भाषण समाप्त हुआ। पाठशाला के जिस हाल में यह भाषण चल रहा था, उसके वातावरण में जो रसोत्पत्ति हो रही थी, उसके स्थायी भाव में कोई परिवर्तन हुआ हो, ऐसा आभास हमें नहीं हुआ। विद्यार्थियों के चेहरों पर उसी अनुपात में मक्खियाँ भिनभिना रही थीं।

अपने भाषण की प्रतिक्रिया का जायजा लेने के लिये प्रधानाध्यापक महोदय ने फिर अपने भाषण का टेप खोल दिया। वह जानना चाहा कि उनके दिये आदर्शों पर जो सहमत हैं, वे हाथ उठायें।

पाँच सौ अस्सी विद्यार्थियों के इस जमघट में सिर्फ दो तीन लड़के थे जो बाकायदा बात को समझ सके थे। उन्होंने हाथ उठाये। उनकी देखा देखी एक के बाद एक हाथ उठने लगे। ये हाथ किसी के समर्थन अथवा विरोध में स्वेच्छा से नहीं उठे थे बल्कि देखा देखी में। अजीब बात यह हुई कि अगली कतार पर बैठी तीन लड़कियों ने हाथ नहीं उठाये। ये लड़कियाँ

छठी जमात मे दो-दो साल बाकायदा बैठे रहने का सम्मान पा चुकी थी। चारों ओर एक मिश्रित प्रतिक्रिया हुई। लड़कियाँ अचल बैठी रही। अगल-बगल क्या हो रहा है, उन्हें कोई आभास नही हुआ।

प्रधानाध्यापक का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। उन्होंने क्लर्क को तुरन्त आदेश दिया कि इन लड़कियो का सर्टीफिकेट काट कर थमा दे। पाठशाला के अनुशासन में हाथ न बढ़ाने वाली छात्राओं की हमे कोई जरूरत नही, इन्हे किसी भी कीमत पर पाठशाला में रखा नही जा सकता।

बैठक खत्म होने पर जब उन लड़कियो की व्यथा कथा जानने के लिये हमारे जैसे बुद्धिजीवी ने उन लड़कियो के इन्टरव्यू लिये तो इस रहस्य का पर्दाफाश हुआ कि वे नितान्त निर्दोष हैं। उन्होंने प्रधानाध्यापक के आदेशो उपदेशो और चेतावनियों, किन्ही का भी सिर पैर समझा ही नही था। अत. उन्होने मतदान मे भाग नही लिया। निष्पक्ष बैठी रही। बडी मुस्तैदी से हमने मोर्चा सम्भाला। प्रधानाध्यापक के भेजे के अन्दर बाहरी बाते, चाहे वे पाठशाला के पक्ष में हो या विपक्ष में घुसानी लोहे के चने चबाने के बराबर थी। फिर भी लोहे के चने चबाने का हमने बीड़ा उठाया। दाँत तो हमारे काफी मजबूत है। अत: प्रधानाध्यापक के न्यायालय के घण्टे की जंजीर खीच कर हम जब उनके सामने रियाया की फरयाद लेकर उपस्थित हुये तो उन्होने हमारी उपस्थिति को नजरअन्दाज कर दिया। पर हम भी सिर पर कफन बाँधकर निकले थे। आम आदमी के प्रतिनिधि की हैसियत से उनके हकों और हितो की रक्षा के लिए प्रधानाध्यापक के विरोध के बावजूद इस बात को उनकी समझदानी मे घुसेड़ने में सफल हो गये कि उन लड़कियो ने आपकी बात को समझा ही नही था। अत: वे मतदान मे भाग नही ले सकी थी। आप उन्हे सदन की सदस्यता से बरखास्त मत करें। वे निर्दोष हैं और यदि आप उन्हे सचमुच में बरखास्त कर देंगे तो सभव है पाठशाला में साम्प्रदायिक दगो की स्थिति उत्पन्न हो सकती है क्योंकि जिन लड़कियों को आप पाठशाला से छुट्टी दिला रहे हैं, वे बहु-सख्यक समुदाय से सम्बन्ध रखती हैं और आप अल्पसंख्यक से।

प्रधानाध्यापक ने बोतल उठाई, दो-चार घूंट (उबले पानी के) पिये और तब कही बोले, "आई डू एग्री विद यू, मि० डोगरे, बट...।"

आठ

आपात स्थिति अपनी चरम सीमा पर थी। इस छोटे से प्रदेश में आपातकाल के तुरन्त बाद हम लोगों ने शिक्षक दिवस पर जो कसमें खाई थी उनकी परिणति क्या हुई, उसके बारे में हम आपको बता चुके हैं। शिक्षक दिवस का प्रण अनुशासन पर्व की शुरूआत था। फिर एक सिलसिला शुरू हुआ जो अब तक जारी है। सिलसिला यह कि महीने के उनतीस दिन शिक्षा विभाग किसी न किसी ट्रेनिंग का आयोजन करता आ रहा है। शिक्षक और शिक्षिकायें पाठशालाओं में बच्चों को शोर मचाने के लिये छोड़कर खुद ट्रेनिंग करते रहते हैं। जिस पाठशाला में दस अध्यापक हर महीने ट्रेनिंग के सिलसिले में राजधानी में होते हैं। प्रधानाध्यापक तो वैसे ही विभाग और पाठशाला के रास्ते पर ही चक्कर लगाते रहते हैं।

आपातकाल के प्रथम वर्ष की सर्दियों में विभाग ने आदेश जारी किया कि इस दौरान एक ट्रेनिंग होगी जिसमें सभी अध्यापकों की उपस्थिति अनिवार्य ही नहीं है बल्कि जो इस आदेश का उल्लंघन करेगा उसे नौकरी से हाथ धोने पड़ सकते हैं। या "मीसा" के अन्दर बन्द किया जा सकता है।

सो जनाब, राज्य के सभी छोटे बड़े, दुबले पतले, ठिगने-मोटे, वामपंथी, दक्षिण पंथी शिक्षकगण राजधानी में पहुँच रहे थे। लग रहा था जैसे कुंभ के मेले में जा रहे हों। वैसे यह प्रशिक्षण भी किसी तीर्थ यात्रा से कम नहीं था। राजधानी गंगटोक में उस समय हर तीसरा पुरुष शिक्षक था और हर तीसरी स्त्री शिक्षिका।

इस पर्वतीय क्षेत्र में वैसे ही नवम्बर महीने में सर्दियाँ अपनी भरपूर अंगड़ाई लेना शुरू कर देती हैं। हमारा प्रशिक्षण भी इसी दौरान शुरू हुआ था। शहर के सबसे ऊँचे स्थल पर स्थित एक विद्यालय में यह प्रशिक्षण केन्द्र लगाया गया था। हमारे पहुँचने के दूसरे-तीसरे दिन से बर्फ

गिरनी शुरू हो गई थी। हमे लगता था कि हम पर्वतारोही [illegible] क्षेत्र मे अपना पहला पड़ाव लगाकर बैठे हैं।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की कुछ स्मृतियाँ बड़ी [illegible] के साथ जुडी हैं।

सुबह दस बजे से पाँच बजे तक कक्षायें होती थीं और [illegible] बाद हम लोग अपने-अपने दड़बो मे घुस जाते थे। [illegible] पढ़ना तो दूर रहा, हाथ तक लिहाफ से बाहर नहीं निकाल [illegible] पाँच बजे से ही अपने अपने बिस्तरो मे घुस जाते थे। और [illegible] घूरते रहते थे अथवा अपने अपने सहपाठियो को गालियाँ [illegible] ये गालियाँ एक दूसरे से होती हुई विभाग के उच्चाधिकारियों [illegible] आपातकाल के प्रणेताओं तक को दी जाती थी। दीवार [illegible] हैं, इसलिये हमने गालियों के कोड वर्ड खोज निकाले थे।

इसी दौरान कुछ चुनिंदा पियक्कड़ों ने सुरा को हम-बिस्तर [illegible] शुरू कर दिया था। इसके लिए पहाड़ी के नीचे [illegible] देशी ठर्रा सप्लाई करके उस सर्दी से निजात [illegible] दिया था। इन दो अढ़ाई महीनों की आय [illegible] हो गई थी क्योंकि रोजाना एक बंधी बंधाई [illegible] पाँच बजे तक मास्टर साहबान पढ़कर वापिस [illegible] गर्म कर रही होती थी।

इस सुरा सप्लाई का सुराग प्रशिक्षण के [illegible] गया था क्योंकि कुछ पियक्कडों ने दिन में [illegible] आना शुरू कर दिया था। परन्तु हम लोग [illegible] हमारा समस्त काम भूमिगत होता था। [illegible] सकता था।

अब हम कक्षा में ले जाकर आपको [illegible] व्यक्तियो से मिलवायेंगे। ये उत्कृष्ट नस्ल [illegible] थे। इस शरद कालीन सम्पर्क कार्यक्रम [illegible] नारायण सिंह वर्मा "चिन्तित"। इस [illegible] एक रिकार्डतोड तथा बेमिसाल है। [illegible]

काठी के यह महोदय जब बगल में दो-चार फाइलें दबाकर कक्षा में प्रवेश करते तो कक्षा में इस प्रकार एक मिश्रित गर्जन होती, जैसे हवाई जहाज छूटते वक्त होती है। चार फुट चौड़े रास्ते से आते वह इस प्रकार रास्ता बनाकर चलते जैसे भीड़ में जा रहे हों ताकि किसी से छू न जायें। यह हर समय शिक्षकों की समस्याओं पर चिन्तित दिखाई देते थे। उनका तकिया कलाम भी कुछ बड़ा ही दिलचस्प है। वह प्रश्न का उत्तर "प्लीज" कह कर देते है। निर्देशक उन्हें कहते कि मि० नारायण आओ और शिक्षकों की मंकाले पद्धति पर भाषण दो। तो वह कहते—"प्लीज"। गरज यह कि "प्लीज" उनके साथ इस कद्र जुड़ गया था कि उनके कमरे में कोई आवारा कुत्ता आ जाता तो उसे "प्लीज" कह कर दुतकारते।

इन महोदय के इस तकियाकलाम के फलस्वरूप उनका नाम इस शिविर में "प्लीज" पड़ गया था।

यह बात अवश्य थी कि इस प्रकार के रोचक व्यक्तियों की वजह से इस शिविर की सर्दी को हम लोग हँस कर ही भगा देते थे।

इस शिविर में विभिन्न कार्यक्रम थे। बूढ़े तोतों को पढ़ाया जा रहा था। उन्हें अनुशासन और सदाचार के पाठ सिखाये जाते थे। सुबह पन्द्रह मिनट के लिए एक सभा होती थी जिसमें प्रत्येक दिन किसी शिक्षक या शिक्षिका को बोलना पड़ता था। इसमें आप चाहें तो धर्मनिरपेक्षता पर भाषण दें, खुद गधे बनें या बैठी जमात को बनायें—आपातकाल में हो रही इस ट्रेनिंग में इसके लिए आपको पूर्ण स्वतन्त्रता थी, मीसा का डर नहीं था। इस सभा का आयोजन अध्यापकों को एक दूसरे से मिलने और "सामूहिकता" की भावना जगाने के लिए किया जाता था।

एक शिक्षक का कुछ समय तक तान्त्रिक लोक में विचरण करने से खोपड़ी का पेंच कुछ ढीला हो गया था। वह अपनी अजीबोगरीब हरकतों से हमारा मन बहलाव करता था। जब वह सभा में स्वनिर्मित अंग्रेजी में श्यामपट पर कुछ लिखकर तान्त्रिकता अथवा किसी ऐसे विषय का बखान करने लग जाता तो हमारी समझ में उसका कोई सिर पैर नहीं आता था। हाँ, सभा में इस कदर हो-हल्ला मचता कि हमारे ठिठुरे जिस्म गरम हो जाते थे।

एक बार सभा मे निर्देशक के साथ अन्य वरिष्ठ पदाधिकारी भी उपस्थित थे। निर्देशक हर दूसरे-तीसरे दिन कक्षा लेने आते थे।

उस दिन एक ऐसे शिक्षक की बारी थी जो अभी-अभी विश्वविद्यालय से आया था। काफी छैला किसिम का लडका था। वह अपने आगे पीछे युवा शिक्षिकाओं की भीड़ लगाए रखता था। उनसे छेड़खानी करता था और पीछे की सीट पर बैठकर चिटो पर ऊटपटांग लिख कर युवा शिक्षिकाओ को पास करता रहता या पढ़ाने वालो के कार्टून बनाता रहता।

उस दिन जब वह मंच पर पहुँचा तो उसने अपनी विशेष अदा से आँख मार कर सभा का अभिवादन किया। कान्वेंटी लहजे मे फर्राटेदार अंग्रेजी मे आज के मजमून की भूमिका बांध कर कहा कि हँसना सेहत के लिए कितना जरूरी होता है। और विशेष कर उस समय जब सर्दी से सभी के दाँत बज रहे हो। हँसना कई प्रकार का होता है और यह थोबड़े पर जड़े दाँतो पर निर्भर करता है। पर आज मैं यहाँ उपस्थित कामरेडो को दरखास्त करूँगा कि वे आज के महत्वपूर्ण कार्यक्रम मे शरीक होकर नाचीज की हौसला अफजाई करें।

निर्देशक तथा अन्य उच्च पदाधिकारियो की ओर मुखातिब होकर बोला—"मुझे आशा है कि इस सभा मे उपस्थित बड़े लोग भी इसमे भाग लेंगे।"

तब उसने उस कार्यक्रम का खुलासा पेश किया। मुँह बंद किए सिर्फ मुस्कराना और अपनी बगल मे बैठे व्यक्ति को मुस्कराहट स्थानान्तर करना अर्थात् "पास द स्माइल"। उसने घोषणा की कि वह पहले स्वयं निर्देशक महोदय को अपनी "स्माइल पास" करेगा फिर निर्देशक महोदय को अपनी बगल वाले को फिर इसी प्रकार सारी कक्षा को।

हमारे जैसे बुद्धू किस्म के फटीचर शिक्षकों के लिए यह हरकत निःसंदेह बहुत बड़े साहस का मामला था। विशेषतयः इस शिक्षक के साहस से हम लोग बहुत प्रभावित हुए क्योंकि निर्देशक का दबदबा इतना ज्यादा था कि बड़े से बड़े साहस वाले शिक्षक का उनके सामने पसीना छूट जाता था।

निर्देशक महोदय के चेहरे पर से अभिजात्य और अपने पद का उच्च-

काठी के यह महोदय जब बगल मे दो-चार फाइलें दबाकर कक्षा मे प्रवेश करते तो कक्षा मे इस प्रकार एक मिश्रित गर्जन होती, जैसे हवाई जहाज छूटते वक्त होती है। चार फुट चौड़े रास्ते से आते वह इस प्रकार रास्ता बनाकर चलते जैसे भीड मे जा रहे हों ताकि किसी से छू न जायें। यह हर समय शिक्षको की समस्याओ पर चिन्तित दिखाई देते थे। उनका तकिया कलाम भी कुछ बड़ा ही दिलचस्प है। वह प्रश्न का उत्तर "प्लीज" कह कर देते है। निर्देशक उन्हे कहते कि मि० नारायण जाओ और शिक्षकों को मैकाले पद्धति पर भाषण दो। तो वह कहते—"प्लीज"। गरज यह कि "प्लीज" उनके साथ इस कद्र जुड गया था कि उनके कमरे में कोई आवारा कुत्ता आ जाता तो उसे "प्लीज" कह कर दुतकारते।

इन महोदय के इस तकियाकलाम के फलस्वरूप उनका नाम इस शिविर मे "प्लीज" पड गया था।

यह बात अवश्य थी कि इस प्रकार के रोचक व्यक्तियों की वजह मे इस शिविर की सर्दी को हम लोग हँस कर ही भगा देते थे।

इस शिविर मे विभिन्न कार्यक्रम थे। बूढे तोतो को पढ़ाया जा रहा था। उन्हे अनुशासन और सदाचार के पाठ सिखाये जाते थे। सुबह पन्द्रह मिनट के लिए एक सभा होती थी जिसमें प्रत्येक दिन किसी शिक्षिक या शिक्षिका को बोलना पडता था। इसमे आप चाहे तो समलैंगिकता पर भाषण दें, खुद गधे बने या बैठी जमात को बनायें—आपातकाल मे हो रही इस ट्रेनिंग मे इसके लिए आपको पूर्ण स्वतन्त्रता थी, मीसा का डर नही था। इस सभा का आयोजन अध्यापको को एक दूसरे से मिलने और "सामूहिकता" की भावना जगाने के लिए किया जाता था।

एक शिक्षक का कुछ समय तक तान्त्रिक लोक मे विचरण करने से खोपड़ी का पेंच कुछ ढीला हो गया था। वह अपनी अजीबोगरीब हरकतों से हमारा मन बहलाव करता था। जब वह सभा मे स्वनिर्मित अंग्रेजी में श्यामपट पर कुछ लिखकर तान्त्रिकता अथवा किसी ऐसे विषय का बखान करने लग जाता तो हमारी समझ में उसका कोई सिर पैर नही आता था। हाँ, सभा में इस कदर हो-हल्ला मचता कि हमारे ठिठुरते जिस्म गरम हो जाते थे।

एक बार सभा में निर्देशक के साथ अन्य वरिष्ठ पदाधिकारी भी उपस्थित थे। निर्देशक हर दूसरे-तीसरे दिन कक्षा लेने आते थे।

उस दिन एक ऐसे शिक्षक की बारी थी जो अभी-अभी विश्वविद्यालय से आया था। काफी छैला किसिम का लड़का था। वह अपने आगे पीछे युवा शिक्षिकाओं की भीड़ लगाए रखता था। उनसे छेड़खानी करता था और पीछे की सीट पर बैठकर चिटों पर ऊटपटांग लिख कर युवा शिक्षिकाओं को पास करता रहता था पढ़ाने वालों के कार्टून बनाता रहता।

उस दिन जब वह मंच पर पहुँचा तो उसने अपनी विशेष अदा से आँख मार कर सभा का अभिवादन किया। कान्वेंटी लहजे में फर्राटेदार अंग्रेजी में आज के मजमून की भूमिका बाँध कर कहा कि हँसना सेहत के लिए कितना जरूरी होता है। और विशेष कर उस समय जब सर्दी से सभी के दाँत बज रहे हों। हँसना कई प्रकार का होता है और यह थोबड़े पर जड़े दाँतों पर निर्भर करता है। पर आज मैं यहाँ उपस्थित कामरेडों को दरख्वास्त करूँगा कि वे आज के महत्वपूर्ण कार्यक्रम में शरीक होकर नाचीज की हौसला अफजाई करें।

निर्देशक तथा अन्य उच्च पदाधिकारियों की ओर मुखातिब होकर बोला—"मुझे आशा है कि इस सभा में उपस्थित बड़े लोग भी इसमें भाग लेंगे।"

तब उसने उस कार्यक्रम का खुलासा पेश किया। मुँह बंद किए सिर्फ मुस्कराना और अपनी बगल में बैठे व्यक्ति को मुस्कराहट स्थानान्तर करना अर्थात् "पास द स्माइल"। उसने घोषणा की कि वह पहले स्वयं निर्देशक महोदय को अपनी "स्माइल पास" करेगा फिर निर्देशक महोदय को अपनी बगल वाले को फिर इसी प्रकार सारी कक्षा को।

हमारे जैसे बुद्धू किस्म के फटीचर शिक्षकों के लिए यह हरकत निःसंदेह बहुत बड़े साहस का मामला था। विशेषतयः इस शिक्षक के साहस से हम लोग बहुत प्रभावित हुए क्योंकि निर्देशक का दबदबा इतना ज्यादा था कि बड़े से बड़े साहस वाले शिक्षक का उनके सामने पसीना छूट जाता था।

निर्देशक महोदय के चेहरे पर से अभिजात्य और अपने पद का उच्च-

दस मिनट की तफरीह थी। बाहर धूप निकली थी और हम दो-तीन शिक्षक मूंगफली खाते बतिया रहे थे। तब चिन्तित महोदय ने अति चिन्तित मुद्रा में हमें सूचना दी कि संयुक्त निर्देशक, ने जो उस प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के निर्देशक भी थे, हमें याद किया था।

पहुँचे तो देखा वह काफी नाराज थे। हमारे ऊपर अशिष्ट व्यवहार का जुर्म था। अन्तिम चेतावनी दी गई कि आइन्दा ऐसी हरकत की तो नौकरी से हाथ धोने पड़ सकते हैं। उन्होंने समझा कर कहा था कि यदि हम शिक्षक ही शिष्टता का उदाहरण प्रस्तुत नहीं कर सकते तो छात्रों की क्या खाक सिखा सकेंगे।

हम इस दोषारोपण का खिताब लेकर चेहरा लटकाये निदेशक के कक्ष से बाहर निकल रहे थे कि शिक्षकों ने हमें घेर लिया।

हम प्रशिक्षण केन्द्र में किताबी पढ़ाई के साथ कुछ हस्तशिल्प आदि का प्रशिक्षण भी दिया जा रहा था। विभिन्न हस्तकला उद्योगों में एक था—"टाई एण्ड टाई" जिसमें कपड़े के टुकड़ों को बाँध कर फिर तरल रंग में कई तरह से भिगो कर विभिन्न प्रकार के पैटर्न तैयार किए जाते थे। कई मीटर कपड़े के थान मंगाए गए थे। कई किलो रंग और बाल्टियाँ।

इस प्रशिक्षण के दौरान बड़ा हास्यास्पद नजारा उपस्थित हो जाता था। हाथ में कपड़े की गाँठ लेकर बाल्टी में डुबोने के लिए अपनी-अपनी बारी का इन्तजार करने तक का धैर्य किसी को भी नहीं था। ऐसे नजारे हम लोग बसों, रेलों तथा सिनेमाघरों की खिड़कियों पर टिकट खरीदते समय उपस्थित करते ही रहते हैं। पंक्ति में खड़े रहने का धैर्य किसको है ? जो पंक्ति में खड़ा अपनी बारी की प्रतीक्षा करता रहता है, वह जिन्दगी की दौड़ में पिछड़ जाएगा। सभी इसी फिराक में होते हैं कि सबसे पहले पहुँचकर अपनी गाँठ भिगोएं। अतः बसों, रेलों तथा सिनेमाघर की खिड़कियों पर किया हुआ प्रशिक्षण इस "गाँठ भिगोइए" अभियान में काम आ रहा है। जिन्होंने लोगों के कन्धों और सिरों पर चढ़कर खिड़की

तक पहुँच कर टिकट लेने की महारत हासिल कर ली थी ऐसे जांबाज कपड़े की गाँठ को सबसे पहले बाल्टी में भिगो कर जब वापस हवाई मार्ग (कन्धों और सिरों से) से आते तो अन्य लड़ाकुओं के कपड़ों पर रंग के छींटे पड़ जाते। प्रशिक्षण केन्द्र के अधिकारी भी क्या कर सकते थे इस गृह युद्ध में ? आखिर उन्होंने ही तो इस प्रशिक्षण का उन्हें आदेश दिया था। प्रशिक्षार्थियों को सीखना ही और फिर वापस अपनी पाठशालाओं में जाकर बच्चों को अच्छी तरह सिखाना है।

इसी दौरान दूसरे दिन जब इस रंगने वाले नाटक की रिहर्सल का पीरियड आया तो चिन्तित महोदय के चेहरे की हवाईयां उड़ रही थी क्योंकि जो कपड़ा मंगवाया था, वह गायब था।

हस्तकला के लिए हमें रोजाना एक-एक पीरियड मिलता था जिसमें उजूल-फिजूल कुछ भी बना सकते थे।

हमारे बीच बीस साल की उम्र के शिक्षकों से लेकर पचास पचपन साल के बूढ़े शिक्षक भी थे। छोटे छोटे बच्चों की तरह वे भी गुड्डे और गुड़ियों का खेल इस प्रशिक्षण में खेल रहे थे। कागज, पैन्सिल, रंग रोगन कैंचियां आदि लेकर ढेरों कागज, कपड़े आदि कुतरते रहते और उपरोक्त सामग्री से कुछ काम की चीजें अपने-अपने कोटों की जेबों में डालते रहते। यह सामग्री उनके लाड़लों की मोजेक और लाड़लियो को गुड्डे-गुड़ियां बनाने के काम आती।

मोजेक आदि बनाने का प्रशिक्षण देने के लिए एक 'आर्ट एण्ड क्राफ्ट' प्रशिक्षक दिल्ली से बुलाया गया था। प्रशिक्षण केन्द्र में शिक्षक चाहे उनसे कुछ सीख न पाए हों पर उनको व्यक्तिगत उपलब्धि कम नहीं थी। उसने इस प्रदेश की सुरा का पान करने में सभी रिकार्ड तोड़ दिए। वह रोज चढ़ा कर ही आता था।

वह पूरी कक्षा को बाहर मैदान में ले जाता और दिन भर खाई मूंगफली के छिलके उठाने के लिए हमें कहता है। उसके अनुसार मूगफलियों के छिलकों से बढ़िया पैटर्न बन सकते थे। अनुशासन पर्व की इस महान

अवधि में हम राज्य भर के शिक्षक जूठी मूंगफलियों के छिलके उठाने का महान अनुशासनात्मक कार्य करते रहे। राजधानी दिल्ली से आए प्रशिक्षक सुरापन की खपत बढा कर राज्य के राजस्व में वृद्धि करते रहे और राज्य की शिक्षा का स्तर बढ़ाने के लिए मुदंसरो की एक जमात शिक्षित होती रही।

हमें विभिन्न क्षेत्रों की व्यवहारिक और मौलिक जानकारी दिलाने के लिए विभिन्न विभागो के विद्वानों की सेवा भी उपलब्ध कराई गई थी। उन विद्वानों में से एक हमें देश की भैंसों और बैलों की नस्लो के बारे में जानकारी देता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति से लेकर आज तक देश से विदेशी नस्ल के कितने "जर्सी बुल" निर्यात किए गए और कितनी देशी भैंसें विदेश भेजी गई, कितने देशी और विदेशी पशुधन की नस्ल मे सुधार हुआ विदेशी पशुधन की तुलना मे देशी पशुधन की प्रजनन शक्ति कैसी है ? इन सभी तथा इनके तथ्यो के आंकड़े हमारे मूढ़ दिमागों में ठूंसे जाते रहे। एक वर्णसंकर बैल की तरह गर्दन हिला-हिला कर यह विद्वान (!) हमारा समय बरबाद करता रहा। उसके बोलने मे एक सांड़ के ही डकराने की आवाज आती थी। हमें लगता था कि हम लोग मवेशियों के चिकित्सक हैं। हमारे दोस्त भारद्वाज और चोपड़ा ने इस विद्वान का एक कार्टून, जिसमें सिर बैल का और धड़ आदमी का बना कर कक्षा मे "पास" करना शुरू कर दिया था।

"कलाकार जन्मजात होते हैं या बनाए जाते हैं।" इसी प्रकार के विषय पर एक विचार गोष्ठी प्रशिक्षण के दौरान आयोजित की गई थी। "शिक्षक जन्मजात होते हैं या उन्हे प्रशिक्षण देकर बनाया जाता है ?" इस विषय पर होस्टल में निर्देशक से लेकर शिक्षक सभी दो-तीन घण्टे तक "मैं" "मैं" "तू" "तू" की नोक झोक मे लीन रहे थे पर निष्कर्ष कुछ भी नहीं निकला था। एक शिक्षक ने हसी मजाक में कह दिया था कि गधो को साबुन से नहला कर गाय नही बनाया जा सकता। जिन शिक्षको ने अपने गौरवशाली शिक्षक जीवन में कभी चाक हाथ मे लेने की घटिया

हरकत नही की थी उनके लिए "टीचिंग एड्स" की भला क्या प्रासंगिकता हो सकती है ? वे चाहे दो महीने ठिठुरते प्रशिक्षण मे शरीक रहे पर जब अपनी पाठशाला में पहुँचे तो उन्होने अपनी पूर्व प्रचलित शिक्षण प्रणाली जारी रखी क्योंकि जिन टीचिंग एड्रों का जिक्र प्रशिक्षण के दौरान दिल्ली से आए पर बिलायत से लौटे प्राध्यापकों ने किया था, वैसी सामग्री राज्य की देहाती पाठशालाओं की बात दूर रही राजधानी की पाठशालाओ में उपलब्ध नही थी। अतः विज्ञान को भी इतिहास तथा रामचरितमानस की चौपाइयों की पद्धति में पढ़ाने का सिलसिला जारी रहा। "टाई एण्ड डाई" जैसी आइटमो को सिखाने के लिए पाठशालाओं के पास कपड़ा और रंग तथा बाल्टियाँ खरीदने के लिए फण्ड नही। अतः पाठशाला मे इस कला को सिखाने का कोई साधन उपलब्ध नही था। पर हमारे जैसे कल्पनाशील तथा बुद्धिजीवी मास्टर ने होली के दिन अपनी अभूतपूर्व स्मरण शक्ति को जिन्दा रखते हुए अपने साथ होली खेलते कुछ छात्र-छात्राओं को "टाई एण्ड डाई" का प्रशिक्षण देकर एक उत्तम उदाहरण प्रस्तुत किया। कुछेक चमचा किस्म के अभिभावकों ने हमारी बुद्धि को दाद दी कि मास्टर महोदय तो समर्पित भावना से हर समय, यहाँ तक की होली खेलते हुए भी तालीम देते रहते हैं, बच्चो को शिक्षित करते रहते हैं।

नौ

कालचक्र बड़ा प्रबल होता है। हमारे देश के अध्यात्मवादी हो चाहे उग्रपंथी, समय की महत्ता को सभी पहचानते हैं। अध्यापकी करते हुये हमें तकरीबन ग्यारह साल हो चुके हैं। किसी भी अध्यापक के जीवन मे इतनी अवधि काफी अहं महत्ता रखती है। इस अवधि में बहुत परिवर्तन हुए विश्व में बहुत उठाकम्पटक हुई। इस अवधि मे विएतनाम की बहादुर कौम ने विश्व के सबसे शक्तिशाली घमण्डीलाल अमेरिका को जमीन सुंघा दी। आदम चाँद पर पहुँच कर आ गया पर हमारे मान्यवर वर्मा साहब की चाँद पर हरी घास उगाने के लिए हमारे देश मे कोई हरित क्रान्ति नही हुई। देश की कोई परियोजना उनकी चाँद को उर्वर बना नहीं सकी।

राजनीति की बात छोड़ दें क्योंकि "कोई नृप होई हमें का हानि" वाली मुद्रा सभी अपनाते हैं तो हम कौन होते हैं जो अकेले अन्धेरे मे लाठियाँ भाँजते क्रान्ति का बिगुल बजायें। शुरू से लेकर अन्त तक जो बात हमने कही है, वह है देश की मौजूदा विकास की ओर अग्रसर होती शिक्षा की बुनियाद। और इस बुनियाद की ईंटओर गारा हम शिक्षक स्वयं होकर भी शिक्षा में मूलभूत परिवर्तन नहीं ला सके हैं।

यथास्थिति को बरकरार रखने की मुद्रा हमारी सांस्कृतिक धरोहर को कोई त्याग नहीं सकता। चिपके रहने की कितनी उज्जवल परम्परा है, मैकाले की शिक्षा पद्धति से चिपके रहना। राष्ट्रीय नेता रोजाना शिक्षा पद्धति मे परिवर्तन लाने की बात करते हैं। उनके भाषण करने की शैली पिछले तीस-बत्तीस सालों से एक ही रही है। "शिक्षा में परिवर्तन होना चाहिये।" यह वाक्य स्कूलों के हैड मास्टरों से लेकर देश के शिक्षा मन्त्री, प्रधानमन्त्री तथा राष्ट्रपति तक कहते आये हैं। जब प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति ऐसा बोलते हैं कि "परिवर्तन होना चाहिये।" "करना है" तो शिक्षा मे परिवर्तन एक औसत स्कूल मास्टर कैसे कर सकता है ?

हर साल कोर्स बदलते रहते हैं और दूसरी कक्षा के बच्चे को इतनी

किताबें लगा दी जाती हैं कि उन्हें खुद पढ़ने के लिये मास्टरों को सालों लग जाते हैं। वे बच्चों को क्या खाक पढ़ायेंगे। किताबों के बोझ को लेकर हमें एक लतीफा याद आ रहा है। एक गधा काफी उदास खड़ा था। उसके लटके चेहरे को देखकर उसके पड़ोसी गधे ने इसका कारण पूछा। जानते हैं उसने क्या उत्तर दिया ? वह अपने मालिक के लड़के का बस्ता स्कूल पहुँचाता था। इसलिये थक जाता था।

देश में शैक्षणिक परिषद् है जिसकी जिम्मेदारी है, इन किताबों के बोझ को बढ़ाने की। इस "सफेद हाथी" ने देश की युवा प्रतिभा तथा देश के धन का इतना दुरुपयोग किया है जिसकी कोई मिसाल नहीं। इतनी चिल्ल-पों के बावजूद यह देश के विद्यार्थियों को कोई दिशा प्रदान नहीं कर सकती है। स्नातक और स्नातकोत्तर अध्यापकों के असमय बाल सफेद करने का श्रेय भी इसी "सफेद हाथी" को है। इस नई पद्धति से देश के विद्यार्थियों की स्थिति यह हो गई है कि न तो पुरानी पद्धति में जर्ब-तकसीम कर सकते हैं और न ही नई पद्धति से। चीन जैसा देश परम्परागत ढंग से "अबकस" (तारों पर मनकों) की पद्धति से अणुबम बनाने में महारत हासिल कर सकता है पर हमारे गणित की उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक बाजार से खरीदी साग-सब्जी का हिसाब जोड़ने के लिये कागज पेन्सिल की सहायता लेते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रतिभा पलायन की प्रतिशतता भी देश में बढ़ी है। इसका परिणाम यह हुआ है कि अमेरिका जैसा दक्षिणपंथी देश हरगोविन्द खुराना पैदा कर सकता है पर हमने "आर्यभट्ट" पैदा किया रूस की बौद्धिक बैसाखियों के सहारे। हमारी पाठ्य पुस्तकें अभी भी अकबर के हरम में कितनी औरतें थी और शाहजहाँ के ताजमहल के इर्द-गिर्द घूम रही हैं।

हमारे प्रधानाध्यापकों की फेहरिस्त में अन्तिम नाम जिन अंग्रेजीदाँ प्रधानाध्यापक का था उन्होंने पाठशाला के प्रशासन में अनुभवी होने के कारण स्थानीय राजनीति से लेकर राजधानी की राजनीति (शिक्षा विभाग) तक अपना सन्तुलन बनाए रखने का एक अद्भुत उदाहरण खड़ा किया है जिसकी वजह है कि लाख विरोध होने पर भी प्रधानाध्यापक के सम्माननीय

पद पर अभी तक सुशोभित होकर पाठशाला के अध्यापको को "अण्डरवेट" करने और खुद (ओव्हर वेट) बनाने मे बाकायदा लँगोट कसे हुये हैं।

उनके इस पाठशाला मे आने के कुछ महीनो के बाद मैडम ने अध्यापकी से इस्तीफा दे दिया था और सक्रिय राजनीति के मैदान में कूद पडी थी। कूदने पर लगने वाली चोटो से पहले ही वाकिफ थी क्योकि उन्होने राजनीति के प्राथमिक दाव पेंच पाठशाला मे ही सीख लिये थे इसलिये राजनीति मे कूदते वक्त चाहे वह ऊँची जगह से छलाग लगाती अथवा नीची जगह से उनके घुटने छिलने अथवा पाँव मे मोच आने की नौबत नही आई। आज वह दल-बदल की राजनीति को बरकरार रखते हुये विपक्ष की बेंच से होती हुई सत्ताधारियों की मेज तक पहुँच चुकी हैं। आखिर कुर्सी भोग की आपाधापी चारों ओर है। चाहे वह पाठशाला में हो या विधान सभा में।

उनके चले जाने के बाद मौजूदा प्रधानाध्यापक के रास्ते से एक रोड़ा हट गया। जनाब करनैलसिह और उनकी स्थायी महबूबा तो शुरू से सत्ताधारियो की ओर थे ही क्योकि वे सत्ता से बाहर नही रह सकते थे। इस प्रकार के कुछ नेता हमारे देश मे हैं जो सत्ता से बाहर रहना नही चाहते सत्ता ही उनकी पहचान है उसके बाहर उनका कोई अस्तित्व नहीं है, सरकार चाहे जो भी हो।

मैडम के चले जाने के बाद सत्ताधारियों की बिरादरी मे एक महिला विधायक (अध्यापिका) के प्रवेश होने से उनका पलड़ा भारी होता गया। अब तक कई अध्यापको के स्तीफे देने, कईयो के तब्दील होने के कारण सेलिब्रेटिड अध्यापक अब पाठशाला में नही थे। अब था जो मंत्रीमडल था, वह सही मायनों मे बढ़िया, कुशल और योग्य मंत्रीमडल बनता जा रहा था। ये विचार हमारे नही हैं बल्कि प्रधानाध्यापक के हैं। नई आई अध्यापिका उच्च-भाव की ग्रन्थि से इतनी पीड़ित थी कि उसके सामने हमारे जैसे अध्यापको की शक्सियत महज कीड़े-मकोड़े से भी गई गुजरी थी।

एक कुशल प्रशासक की तरह पाठशाला की चौतर्फी तरक्की के लिये हमारे प्रधानाध्यापक ने बाकायदा पाठशाला को विभिन्न घटको में बांट

470003

दिया। महत्वपूर्ण पद उस घटक को दिये जो उनका समर्थन करता था। हमारे जैसे अध्यापकों को कोई महत्वपूर्ण पद न देकर सिर्फ विधायक (अध्यापक) ही रहने दिया क्योंकि हम उनके संदिग्ध चरित्र के व्यक्ति थे। उन्होंने दूसरी तरह से हमारी प्रतिभा का इस्तेमाल किया। शुरू में हमें लगा था कि हमारी रचनात्मक प्रतिभा को काफी अच्छा मौसम मिल रहा है, अच्छी स्वास्थ्यवर्धक खाद मिल रही है। इस खाद को सेवन करके हम पूरी तन्मयता से लँगोट कसकर जंगे मैदान में कूद पड़े। जनाब प्रधानाध्यापक हमारी तारीफ के पुल बाँधते अघाते नहीं थे।

पाठशाला के विभिन्न कार्यक्रमों में हमारी जो भूमिका थी, वह एक ऐसे व्यक्ति की थी जिसे किसी भी वक्त और किसी स्थान पर इस्तेमाल किया जा सकता था अर्थात् अंग्रेजी में जिसे "स्पेयर पार्ट" कहते हैं, वैसी ही स्थिति थी हमारी।

हमने अपनी प्रतिभा को बढ़ने, फूलने-फलने के लिये जी-जान से, बढ़-चढ़कर भाग लेना शुरू कर दिया। पाठशाला के विभिन्न कार्यक्रमों में प्रतिभा की छाप पड़ती जा रही थी। प्रधानाध्यापक हमें व्यस्त रख कर एक पत्थर से दो चिड़िया मारना चाहते थे अर्थात् हमें व्यस्त रख कर पाठशाला की मौजूदा स्थिति में जो फेरबदल कर रहे थे यानि पाठशाला के संविधान में संशोधन से लेकर अन्य परिवर्तनों तक में हमें असलग्न रखना चाहते थे।

ऐसी स्थिति में हमने पाठशाला की मकड़ी लगी दीवारों की झाड़-पोंछ करवा कर उन्हें अपनी चित्र वीथियों से सजा दिया। उस समय हमें लगता था कि हम अध्यापक न होकर कोई "इन्टीरियर डेकोरेटर" हों या झाड़-पोंछ करने वाला भाड़े पर लिया कोई मजदूर।

हम जो कुछ कर रहे थे वह किसी ऐसी भावना के तहत नहीं कर रहे थे जिससे हमारी कोई तारीफ न करें। वैसे प्रधानाध्यापक प्रायः हमारी प्रतिभा की तारीफ करते रहते थे। पर सिर्फ तारीफ से ही हम सन्तुष्ट नहीं थे। हम साधारण फलकामी जीव थे। हमारे विचार में विश्व में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होता जो फल की आशा न रखता हो।

सो जनाब इस सारी दिखावट का हश्र क्या हुआ? प्रधानाध्यापक ने

बारी-बारी से वार्षिक समारोह में सारे खिताब अपने चहेतों को बाँट दिये। "कारवाँ गुजर गया गुबार देखते रहे" की मुद्रा में खड़े हम मुँह बाये खड़े रहे।

हमारे विरोधी हमारी बैसाखियों के सहारे उन खिताबों को गले से लटकाकर हमारी छाती पर मूंग दलते रहे। हमारा 'हाउस' किसी भी आइटम में कोई भी उल्लेखनीय अंक प्राप्त नहीं कर सका।

...और अन्त में इस कथा का विदूषक अर्थात् 'मैं' या 'हम' भी इस अरण्य रोदन में अब शामिल नहीं है। क्योंकि उसकी प्रतिभा का सदुपयोग कहें या दुरुपयोग इस ढंग से हुआ कि अन्तिम प्रधानाध्यापक द्वारा निर्मित 'लॉबी' में वह अकेला पड़ गया। पाठशाला उसके लिये एक यातनागृह से कम नहीं रह गई थी। सुबह उठकर पाठशाला जाने का ख्याल मन में आते ही दस्त लग जाते थे और खारिश होने लग जाती थी। स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि उस बेचारे को सूख कर काँटा होते देखकर उसकी पत्नी ने उसे जगह बदल देने की सलाह दी। नई जगह पर हो सकता है स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़े। पर उसने इसी बीच निर्णय ले लिया था कि चूँकि उसकी आधी ताकत दस्तों और खारिश ने तबाह कर दी और बाकी [illegible] यह देश की पीढ़ी को 'सुशिक्षित' करके इस्तेमाल नहीं करना चाहता, इ[illegible] अरण्य रोदन में वह अब अपना सुर मिला नहीं सकता।

उसने मैकाले साहब को अन्तिम प्रणाम किया और [illegible] मुहूर्त में शिक्षा विभाग के नाम—सेठी साहब के नाम, जो अब उ[illegible] के शिक्षा अधिकारी थे, अपना इस्तीफा लिखा और सिर पर कफन बाँध कर इस 'अरण्य रोदन' को लिखने के लिए कलम उठा ली। आमीन्।

सुवास दीपक

जन्म अप्रैल, 1948

शिक्षा : एम० ए० (हिन्दी)

प्रकाशित पुस्तक अभिवेक (नेपाली उपन्यास) गान्तोक से नेपाली की साहित्यक पत्रिका 'सुधा' और 'हिमाली बेला' (समाचार पत्र) के सम्पादन के पश्चात अब स्वतन्त्र रूप से 'विचार' का सम्पादन/संचालन कर रहे हैं। उन्होंने भारतीय नेपालियों की समस्याओं पर काफी लिखा है साथ ही भारतीय नेपाली कहानियों को हिन्दी में अनुवाद करके हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में छपवाने का श्रेय सुवास दीपक को ही जाता है। चण्डीगढ़ से प्रकाशित 'साहित्य निर्झर' का भारतीय नेपाली कहानी विशेषांक का अनुवाद/सम्पादन इन्होंने ही किया था।

हिन्दी में व्यंग्य लेख 'सारिका', 'व्यंग्यम्' आदि में छप चुके हैं। व्यंग्यम प्रकाशन से प्रकाशित प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाओं में इनका एक व्यंग्य लेख भी शामिल है।